Regd. No. 58414/94

स्वामी रामानन्द जी द्वारा संचालित

हमारी साधना

त्रैमासिक

वर्ष 30 • अंक 1 • जनवरी–मार्च 2023

मूल्य रु. 25/–

श्रीगुर पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती॥

करुणामयी सुमित्रा माँ

हमारी साधना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।
न त्वहं कामये राज्यम्, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां, प्राणिनामार्ति नाशनम्।।

वर्षः 30 जनवरी-मार्च 2023 अंकः 1

भजन

गुरु सम हितू न दूसर पायों।
अगनित आस लगाय हिये महँ निसिदिन चहुँ दिसि धायों।
पै कछु लग्यो न हाथ अंत में कर मलि मलि पछितायों।।
परतहि चरन सरन गुरुवर की निज भ्रम सकल नसायों।
मिटे सोक संताप जुगन के आनंद सिन्धु समायों।।
समय परे अबहुँ जब कबहुँ नेकहु मन में ध्यायों।
बिनु प्रयास मन बांछित फल लहि हिय में सदा अघायों।।
रामसरन गुन गावत गुरु के फूलो नाहिं समायों।
करि कछु जुगुति विशेष न बरन्यों बीती अपनि बतायों।।

भजन संख्या 5 — स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'

प्रकाशक
साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम,
संन्यास रोड, कनखल,
हरिद्वार-249408
फोनः 01334-311821
मोबाइलः 08273494285

सम्पादिका
श्रीमती रमना सेखड़ी
995, शिवाजी स्ट्रीट,
आर्य समाज रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
मोबाइलः 09711499298

उप-सम्पादक
श्री रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'
1018, महागुन मैंशन-1,
इन्दिरापुरम,
गाजियाबाद-201014
ई-मेलः rcgupta1018@gmail.com
मोबाइलः 09818385001

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	रचयिता	पृ.सं.
1.	चित्र – करुणामयी सुमित्रा माँ		2
2.	भजन	स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'	3
3.	सम्पादकीय		5-6
4.	इक बार तो आ जाओ		7
5.	मैं द्वार पड़ी तेरे मेरे मन में समा जाओ		7
6.	गीता विमर्श – श्रीमद्भगवद्गीता पंचमोऽध्याय (गतांक से आगे)	स्वामी रामानन्द जी	8-11
7.	गुरु वाणी		12
8.	Letters to Seekers — Letter No. 7 and 8		13-15
9.	सरल जीवन ही सच्चा ज्ञान है	श्री दिलीप देवनानी जी	16
10.	सर्वधर्मान्परित्यज्य	रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'	17-19
11.	मैं का भाव हटाओ	रमना सेखड़ी	20-21
12.	कर्म	स्वामी रामानन्द जी	21-22
13.	पूज्य साहू जी का जीवन चरित्र - द्वितीय भाग	अनिल चन्द्र मित्तल	23-26
14.	वार्षिक शिविर-2022 बीसलपुर (17 से 20 नवम्बर 2022) – विवरण एवं प्रवचन सार		27-31
15.	कार्यकारिणी की बैठक का विवरण		32-33
16.	गुरुदेव जन्म दिवस शिविर (18 से 21 दिसम्बर 2022) – विवरण एवं प्रवचन सार		34-35
17.	दानदाताओं की सूची		36-38
18.	शोक समाचार		39
19.	श्री गुरुदेव निर्वाण-दिवस साधना शिविर-2023 (14 से 21 अप्रैल 2023) – सूचना		40
20.	बाल-साधना-शिविर-2023 (7 से 11 जून 2023) – सूचना		41
21.	श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य		42
22.	चित्र - कानपुर सत्संग में जन्म दिवस के अवसर पर गुरुदेव के मन्दिर की एक झलक		43
23.	चित्र - गुरुदेव जन्म दिवस शिविर (18 से 21 दिसम्बर 2022)		43-44

Printed and Published by Shri Dinesh Bahl for and on behalf of Swami Ramanand Sadhna Pariwar, Sadhna Dham, Sanyasa Road, KANKHAL-Haridwar (Uttarakhand) and printed at Rakmo Press Pvt. Ltd., C-59, Okhla Industrial Area Phase-I, New Delhi-110020.

सम्पादकीय

सभी साधक भाई-बहनों को सम्पादक-मण्डल का प्रेम भरा राम-राम, अभिनन्दन और नव वर्ष की शुभकामनाएँ!

पूज्य गुरुदेव ने पत्र संख्या 264 में लिखा है –

'तुलसी रामायण मुझे बहुत प्रिय तथा उपयोगी ग्रन्थ लगता है। उसे पढ़ने से आपमें पाण्डित्य की भावना भी जगेगी। अतः थोड़ा सा पाठ नित्य प्रति रामायण जी का कीजियेगा।'

ये भाव थे गुरुदेव के रामायण के प्रति।

ऐसी रामायण में भी दोषारोपण कर रहे हैं कुछ आसुरी प्रवृत्ति के लोग, सम्भवतः राजनैतिक स्वार्थों को साधने के उद्देश्य से। ईश्वर ऐसे लोगों को सद्बुद्धि दें।

गुरु महाराज की कृपा हम साधकों पर अनवरत होती रहती है जिसका प्रत्यक्ष दर्शन दिगोली तपस्थली के विकास में किया जा सकता है। यद्यपि गुरुदेव स्थूल रूप से हमारे मध्य में नहीं हैं तो भी हमारा कर्तव्य है कि हम प्रतिदिन गुरुदेव के साहित्य के कुछ अंश का अध्ययन किया करें और उसमें दर्शाये गये मार्गदर्शन का अनुसरण किया करें। रामायण में स्वयं भगवान राम ने कहा है –

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई।
मम अनुसासन मानै जोई॥

इसी बात को ध्यान में रखकर, जैसा कि पहले भी जानकारी दी जा चुकी है, साधना धाम में गुरु महाराज का साहित्य निःशुल्क कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त पत्रिका के प्रत्येक अंक में भी गुरुदेव के साहित्य के कुछ अंश प्रकाशित किये जाते हैं। तकनीकी प्रगति का लाभ उठाते हुए पत्रिका अब वेबसाइट पर भी उपलब्ध है।

गत तीन वर्षों की 12 पत्रिकाएं www.sadhnaparivar.in नामक वेबसाइट पर पहले ही अपलोड की जा चुकी हैं।

एक विशेष बात यह है कि गुरुदेव के जीवनकाल में उनके सान्निध्य में रह चुके साधकों के निजी अनुभवों से साक्षात्कार करने के उद्देश्य से एक धारावाहिक लेख गत तिमाही से आरम्भ किया गया है जिसमें श्री अनिल चन्द्र मित्तल जी के द्वारा अपने पिताश्री पूज्य साहू काशीनाथ जी के गुरुदेव के सम्पर्क में बिताये गये समय के विस्तृत विवरण का प्रथम भाग प्रस्तुत किया गया था। इस पत्रिका में उसका द्वितीय भाग प्रस्तुत है। आप देखेंगे कि किस प्रकार पूज्य गुरुदेव ने साहू काशीनाथ जी की धर्मपत्नी श्रीमती सरस्वती जी के सिर पर हाथ रखकर 10 मिनट में जीवन परिवर्तित कर दिया था। ऐसा ही अनुभव अनेकों साधकों का रहा होगा।

ऐसे महान् गुरु के चरणों में शत शत नमन।

पाठकों से नम्र निवेदन है कि पत्रिका के सम्पादन में जो त्रुटियाँ रह गई हों उनको क्षमा करते हुए सुधार के लिये सुझाव व अपनी मौलिक कृतियाँ (लेख, कवितायें व भजन) प्रेषित करते रहें।

पत्रिका के लिये भजन, लेख आदि रचनाएँ मौलिक (स्वरचित) हों तो उत्तम है। यदि कहीं से लिये गये हैं तो संकलनकर्ता लिखकर अपना नाम लिखें। लेख आदि पूज्य गुरुदेव की साधना पद्धति से मेल खाते हुए होने चाहिये।

आगामी अंकों के लिये साधकगण कृपया अपने भजन, कवितायें व लेख इत्यादि, डाक द्वारा पत्रिका की सम्पादिका अथवा उप-सम्पादक के पते पर; WhatsApp के माध्यम से उनके मोबाइल 09711499298 या 09818385001 पर; अथवा उनके ई-मेल info.sadhnaparivar@gmail.com या rcgupta1018@gmail.com पर प्रेषित करें।

इक बार तो आ जाओ

हे सतगुरु मेरे दाता प्रभु राम मेरे दाता,
इक बार तो आ जाओ इक बार तो आ जाओ।
नैया डगमग डोले और खाये हिचकोले,
पतवार संभालो प्रभु इक बार तो आ जाओ।
मैं दीन भिखारी हूँ इक तेरा सहारा है,
यही आस मेरे गुरु जी इक बार तो आ जाओ।
तेरे नाम के सुमिरन से भव बन्धन कट जायें,
तेरी कृपा प्रसाद मिले इक बार तो आ जाओ।
जन्मों की प्यासी हूँ अब शरण तिहारी हूँ,
तेरे चरणों का प्यार मिले इक बार तो आ जाओ।
हे सतगुरु मेरे दाता प्रभु राम मेरे दाता,
इक बार तो आ जाओ इक बार तो आ जाओ।

मैं द्वार पड़ी तेरे मेरे मन में समा जाओ

दिल की हर धड़कन में प्रभु आप ही बस जाओ,
मैं द्वार पड़ी तेरे मेरे मन में समा जाओ।
इक तेरे सिवा भगवन कोई और न दूजा है,
किसका मैं ध्यान करूँ कोई और नहीं भगवन।
नयनों में आन बसो प्रभु करुणा सागर हो,
तेरा नाम सुमिर कर मैं तुझमें ही खो जाऊँ।
दीन बन्धु कहाते हो प्रभु दया के सागर हो,
मझधार पड़ी नैया प्रभु पार लगा जाओ।
दिल की हर धड़कन में प्रभु आप ही बस जाओ,
मैं द्वार पड़ी तेरे मेरे मन में समा जाओ।

गीता विमर्श

श्रीमद्भगवद्गीता पंचमोऽध्याय

(गतांक से आगे)

भगवान् का इस कर्मफल-विधान के साथ क्या सम्बन्ध है? क्या यह उसकी रचना है जो कर्मफल का चक्र चलता है? उत्तर में कहा –

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥14॥

'भगवान् लोक के कर्तापन, कर्मों अथवा कर्मफल-विधान का निर्माण नहीं करते। स्वभाव ही बरतता है' ॥14॥

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥15॥

'सर्वव्यापी परमेश्वर किसी के पाप को नहीं लेता और न किसी के पुण्य को लेता है। ज्ञान, अज्ञान से ढका है, अतः लोग मोह में पड़ जाते हैं' ॥15॥

ये दोनों श्लोक साथ पढ़ने से ही ठीक समझे जा सकेंगे। भगवान् कुछ करता नहीं, कुछ लेता भी नहीं। लोग जानते नहीं हैं, इसलिये उसके करने की और उसके लेने-देने की बातें सोचते हैं। यह मतलब है इन दोनों श्लोकों का।

तो करता कौन है? लेता कौन है? उत्तर में कहा – स्वभाव ही प्रवृत्त होता है, बरतता है। यह सब स्वभाव से ही होता है। श्वेताश्वतर उपनिषद् की याद हो आती है। वहाँ भी तो ऐसा ही कहा है।

क्या अर्थ है 'स्वभाव' का? गीता के आठवें अध्याय में **'स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते'** स्वभाव अध्यात्म कहा जाता है – ऐसा कहा है। आत्मा के विषय में – आत्मतत्व से सम्बन्ध रखने वाला पुरुषोत्तम का भाव अध्यात्म है। वह अनन्तसत्ता जो आत्मा के रूप में इस देह की अधिष्ठातृ बनकर खेल करती है, वह अध्यात्म कहलाता है। वही स्वभाव है। उस आत्मरूप में पुरुषोत्तम का प्रकट हुआ जो भाव है, उसी के कारण तो कर्तृत्व है, और कर्म का फल से संयोग है। यह सारा खेल तो व्यष्टि में पुरुषोत्तम के प्रकट होने के कारण है। यही स्वभाव का बरतना है। यह समझना कठिन न होना चाहिए।

वहाँ तो नकारात्मक कथन भी है। प्रभु कर्तृत्वादि का सृजन नहीं करते हैं? वह स्वभावतः होता है। उसके रचे बिना यहाँ क्या रचा जाता है? जो कुछ भी यहाँ होता है, वास्तव में उसी के किये से तो होता है। वही तो सभी के भीतर बैठकर नचाता है, सभी को यन्त्रारूढ़ करके। यह समूची रचना उसी के द्वारा है तो इसमें यह कर्तृत्वादि का विधान भी तो उसी का है। तो फिर क्यों कहा कि वह इसका सृजन नहीं करता।

उसकी सृष्टि वैसी नहीं होती है जैसी हमारी होती है। वह अहंकार से रहित, काम संकल्प से रहित, सहज रचना होती है, जैसे सूर्य का तपना होता है। ऐसा विधान करके हमें परेशान करने का प्रयोजन नहीं है। लोग आक्षेप करते हैं – भगवान् ने ऐसा विधान ही क्यों किया जिससे लोगों को बन्धन हो, परेशानी हो, दुःख हो? ऐसी दुनियाँ क्यों नहीं बना दी जो सभी आनन्द ही आनन्द होती? क्या इस सभी की अन्तिम जिम्मेदारी उस रचयिता पर ही नहीं है? ऐसा सोचा जाता है। अन्तिम जिम्मेदारी वास्तव में उस प्रभु पर ही तो है और किस पर हो सकती है? वह जिम्मेदारी वाला होता हुआ भी इससे रहित है। किसी काम-संकल्प से यह रचना नहीं रची गई। यह तो उसकी सहज अभिव्यक्ति है इस स्तर पर। जैसे सूर्य को तपने के लिये दोष नहीं, अग्नि को गर्मी के लिये दोष नहीं, ऐसे ही प्रभु को इस रचना के लिये दोष नहीं दिया जा सकता।

क्योंकि यह सहज अभिव्यक्ति है, इसलिये वास्तव में उसमें कर्तृत्व भी नहीं। वह करता हुआ भी अकर्ता है। इसी बात को बताने के लिये यह कहा है 'वह नहीं रचता

है'। यह सभी स्वाभाविक है। उसके होने से यह सभी हो जाता है। उसे यत्न करके कुछ नहीं करना पड़ता।

यदि स्वभाव का अर्थ 'अध्यात्म' न भी लिया जाये तो भी श्लोक का अर्थ समझना कठिन न होना चाहिए। स्वभाव, सहज भाव होता है। जो सत्ता है उसकी किसी भी आन्तरिक अथवा बाह्य प्रेरणा विशेष से रहित सहज अभिव्यक्ति ही स्वभाव है।

पन्द्रहवाँ श्लोक भी ऐसी ही समस्या है। भगवान् किसी का पुण्य नहीं लेते और किसी का पाप भी नहीं लेते। भगवान् भक्तिभाव से दिये उपहार को स्वीकार करते हैं, यह हम नवें अध्याय के कथन से जानते हैं। 'कर्मों को मुझ में रख दे, मन, बुद्धि मुझ में अर्पित कर दे' आदि-आदि निर्देश तो भगवान् ने अनेक बार किये हैं और अब कहते हैं, वह पाप-पुण्य स्वीकार नहीं करता। यदि कर्मों को स्वीकार करता है तो उसके फल को भी तो उसे स्वीकार करना होगा। अन्यथा कर्म-संन्यास तो निरर्थक हो जाता है। फल का बन्धन ही तो घोर बन्धन है।

क्या अर्थ हो सकता है इस उक्ति का? एक ही अर्थ है। देने वाला दे देता है, कर्म-बन्धन से रहित हो जाता है देकर, लेने वाला लेता भी नहीं, अर्थात् कर्म-बन्धन में आता भी नहीं। देने वाले के लिये उसने ले लिया, परन्तु अपनी दृष्टि से तो उसने लिया ही नहीं। वह तो उस तक पहुँचने से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। अन्धकार, सूर्य तक पहुँचे बिना ही समाप्त हो जाता है। ठीक ऐसे ही यहाँ होता है। वह तो वास्तव में लेता हुआ भी नहीं लेता। सभी कुछ तो पहिले ही उसका है, वह ले तो कहाँ से ले। देकर व्यक्ति स्वयं ही तो अपने बोझे को हल्का करता है वह बोझा वास्तव में पहले भी तो मालिक के कन्धों पर था। यही बात आगे कही है।

अज्ञान ने ज्ञान को ढांप लिया है, अत: मोह होता है। वास्तव में कर्तृत्वादि कब तक हैं? जब तक वह एक सत्ता जो सभी कुछ करने कराने वाली है, दीखती नहीं। तभी तक कर्म है और तभी तक कर्मफल-संयोग। जब वही एक दीखता है तो दूसरा अलग से रहता ही नहीं। फिर कर्तृत्व, कर्म और कर्मफल संयोग भी समाप्त हो जाता है, वही सब कुछ हो जाता है।

ऐसे ही परमद्वैत में समर्पण की परिश्रांति होती है। जब वही देने वाला दीखता है और वही लेने वाला, तो न देना रहता है और न लेना। न पाप रहता है और न पुण्य।

जब यह दीखता है कि सभी उसका है –पाप भी और पुण्य भी, मेरा तो कुछ है ही नहीं, तो किसे दिया जाता है? जब कर्ता ही नहीं रहता तो क्या पाप और क्या पुण्य? यह सारी साधना और यह समूची भावना तो तब तक है जब तक आँख पूरी तरह से खुली नहीं। जब आँख खुलती है तो यह भोले बच्चों का खेल हो जाता है। अज्ञान से क्रमश: ज्ञान में प्रवेश होता है। जैसे-जैसे ऊँची चेतना जगती है, साधना समाप्त होती जाती है। करने-कराने को कुछ नहीं रहता, देने को कुछ नहीं रहता। बस विचित्र स्थिति होती है। श्रीगुरु अर्जुनदेव सुखमनि में कहते हैं –

जब पूरन न करता प्रभु सोई।
तब जम की त्रास कहहु किस होई॥
जब अविगत अगोचर प्रभु एका।
तब चित्रगुप्त किसु पूछतु लेखा॥
जब नाथ निरञ्जन अगोचर अगाधे।
तब कउन छूटे कउन बंधन बांधे॥
आपन आप आप ही अचरजा।
नानक आपन रूप आपही उपरजा॥

क्या यह दोनों श्लोक मायावाद की पुष्टि नहीं करते? जो वाद के मस्ताने हैं उनके लिये करते होंगे। बाकी गीता को, भगवान् की उक्तियों को और गीता की साधना को देखने से तो वैसा करते दिखाई नहीं देते। वास्तव में यह कर्म-समर्पण की सिद्धि किस प्रकार से होती है, यह बताते हैं। कैसे विचित्र तरीके से योगेश्वर कर्म का समर्पण स्वीकार करते हुए भी अछूते रहते हैं।

यही स्थिति सिद्धयोगी की हो जानी चाहिए। कर्म उस तक पहुँचने से पूर्व ही भस्म हो जाने चाहिए। दूसरों

के कर्मों के लेने से यदि हमें कर्म का बन्धन हो जाता है तो भीतर अभी कुछ कमी है। उस लेने में कहीं काम-संकल्प है, कहीं अहं की उलझन है। प्रभुवत् हुआ प्रभुभक्त तो कर्मों को वैसे ही अछूता रहकर स्वीकार करने योग्य हो जाना चाहिये जैसे भगवान्।

चौदहवें श्लोक में भगवान् के लिये प्रभु शब्द का प्रयोग हुआ। जिसका प्रभुत्व है, अनुशासन बरता जाता है, जो अन्तर्यामी है और बहिर्यामी भी, वह प्रभु है। वह सृष्टि न करता हुआ भी करने वाला है, अनुशास्ता है। यही उस प्रयोग का महत्त्व प्रतीत होता है।

पन्द्रहवें श्लोक में विभुः शब्द का प्रयोग भी बिना प्रयोजन नहीं है। विभु, व्यापक को कहते हैं। जो वस्तु दी जाती है यदि लेने वाला उसमें भी रमा है तो उसकी स्वीकृति-अस्वीकृति कैसी? बाहर अलग होकर ही तो स्वीकृति होती है वस्तुओं की, और जिसमें लेने वाला रमा हुआ है वह तो पहले से ही स्वीकृत है, अब उसका नया आदान-प्रदान कैसा? जो प्रभु का है वह उसको क्या देते हो।

'लोकस्य' का अर्थ है लोगों का। सामान्य अर्थ कर्मफल-संयोग – कर्म का फल से संयोग। अमुक कर्म का अमुक फल होगा, ऐसा विधान उसने बाहर से लागू नहीं किया। जैसे गेहूँ का बीज बोने से गेहूँ का पौधा उपजता है, जैसे पानी नीचे की ओर बहता है, ऐसे ही कर्म स्वयमेव ही अपने सहज परिपाक को लाभ करता है। यही स्वभाव का बरतना है।

उसका विधान व्यक्तियों की परवाह करता हुआ नहीं चलता और न ही देश-काल की परवाह करता हुआ। सहज स्वाभाविक प्रकृति की विकासकारणी लीला है। वह चलता है। बस, वह प्रकृति अपने नियत मार्ग पर चलती चली जाती है। यह न होगा कि यह सब कुछ ही उस पुरुषोत्तम से है। परा-अपरा उसकी प्रकृतियाँ ही तो हैं जिनके द्वारा यह खेल होता है। वह इन दोनों भावों से परे रहता है, अतीत रहता है। यह तो अतिक्रान्त पुरुषोत्तम भाव है, उसकी ओर इशारा है इस प्रभु में और विभु में।

जो सिद्धावस्था की प्रतीति है, उसकी सत्यता का परिणाम यह न होना चाहिए कि हम साधनावस्था का तिरस्कार करें। यदि हम अपने वर्तमान ज्ञान की सीमाओं को और विकारों के अस्तित्व को स्वीकार न करेंगे और उनके द्वारा उनमें से आगे चलने की चेष्टा न करेंगे तो सिद्धस्थिति कभी लाभ ही नहीं हो सकेगी। साधना की मांग है कि तुम जो और जैसे हो वहीं से आगे चलो। ऐसा सम्भव है उसी स्थिति के अनुकूल साधना करने से। भगवान् ही कराने वाले हैं, इस बौद्धिक ज्ञान का आश्रय लेकर साधना की भावना का परित्याग करना निपट मूढ़ता होगी। साधना बलात्कार से छूटा करती है, छोड़नी नहीं होती, यह याद रखने की बात है।

अब संन्यास के परिणामस्वरूप जगने वाला ज्ञान कैसा है और उससे क्या होता है, वह बताते हैं।

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः।
तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्॥16॥

'जिनके आत्मा के ज्ञान के द्वारा, वह अज्ञान नष्ट कर दिया गया है, उनका ज्ञान सूर्य की भाँति उस परमतत्व को प्रकाशित कर देता है'॥16॥

अज्ञान ने ज्ञान को ढांप रखा है, इसलिये प्राणी मोह में पड़ते हैं, ऐसा पिछले श्लोक में कहा है। परन्तु वह अवस्था तो जाने वाली है। विकास-क्रम में क्रमशः ज्ञान बढ़ता है, समझ बढ़ती है और अज्ञान दूर होता जाता है। अज्ञान क्या है? अधूरा जानना और अधूरा समझना। जो समूची तस्वीर को ठीक देखता है, उसे वस्तुओं की ठीक-ठीक प्रकृति और मूल्य समझ में आ सकता है। समष्टि को जान लेने से व्यक्ति के स्थानादि का ठीक पता चल पाता है।

विकासक्रम में क्रमशः अधिक ऊँची, अधिक गहराई तक जाने वाली और अधिक विस्तृत चेतना जगती है। अधिक समझ आती है। मोह का कारणभूत अज्ञान नष्ट होता जाता है, जैसे-जैसे वह चेतना हमारे मन, बुद्धि आदि में व्याप्त होती जाती है। समय आता

है जब व्यक्ति को सभी कुछ के पीछे जो अव्यक्त है उसका हाथ दीखने लगता है कण-कण में। प्रकृति में से प्रकृति के पार परमेश्वर की ओर दृष्टि उठती है। वह उसको गहरे में, सभी के हृदयस्थल में भी ढूंढ़ लेती है। सभी कुछ जगमगा उठता है उसकी सत्ता से। सभी खेल उसी में और उसी का दीखता है।

ज्ञान अज्ञान को नष्ट करता है। ज्ञान की जागृति से अज्ञान वास्तव में स्वत: ही दूर हो जाता है। किसी और चेष्टा की आवश्यकता ही नहीं रहती।

अज्ञान कहाँ बसता है? निम्न स्तरों की सीमित चेष्टा का नाम ही तो अज्ञान है। अजागृत चेतना की स्थिति में ही ऐसा हो सकता है और इसी को तो अज्ञान कहते हैं। आत्मा तो ज्ञानरूप है ही, इसमें सन्देह नहीं। भीतर छिपा ज्ञान प्रकट होता है, विकास के क्रम में आगे-आगे बढ़ने पर। बीज में पौधा छिपा तो रहता है, परन्तु प्रकट होता है विशेष प्रकार के प्रभावों को पाकर ही। ठीक ऐसा ही सत्य है आत्मा के विषय में। अत: 'आत्मन:' – अपने आत्मा के। यह ज्ञान अथवा अज्ञान किसी के साथ भी लगाया जा सकता है। आत्मा का अज्ञान या आत्मा का ज्ञान। 'जिसके आत्मा के ज्ञान के द्वारा वह अज्ञान' ऐसा भी अर्थ ठीक ही है और 'जिनके ज्ञान के द्वारा वह आत्मा का अज्ञान' ऐसा भी।

उस ज्ञान का परिणाम क्या होता है? वह ज्ञान **'तत्पर'** – उस परमतत्व को – पुरुषोत्तम को – सूर्य की भाँति प्रकाशित कर देता है। उस परमतत्व की प्रतीति हो जाती है, उस ज्ञान के जग जाने से। जब हम कर्म के बन्धन से रहित हो जाते हैं 14वें तथा 15वें श्लोक में वर्णित रहस्य पाकर तब 'प्रकाश' होता है। तब भगवान् की अनुभूति होती है। हम उस भागवती चेतना में प्रवेश कर पाते हैं, वह जो अनन्त है और आनन्दमय है उसमें।

क्या वह बोध और उस भागवती चेतना में प्रवेश अलग-अलग हैं? वह पूर्वरूप है। वह अन्त:शोधन है, यह दिव्यीकरण है। बस, इतना ही अन्तर है। वह मल-निर्मोचन है, यह रंग देना है। ज्ञान का अनिवार्य परिणाम होती है यह स्थिति। वास्तव में यह उसका परिपाक ही है। इसके लिये कुछ चेष्टा की आवश्यकता नहीं। जैसे पका हुआ फल टपकता ही है, ऐसे ही ज्ञान का परिणाम भागवती चेतना की जागृति होना ही है।

रास्ते पर चलता हुआ ज्ञान को पाता है। **'तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति'** और ज्ञान का सहज परिणाम होता है पुरुषोत्तम में स्थिति। आत्मा का ज्ञान ही ज्ञान कहलाता है। आत्मविकास में यह सहज जागृत होता है। यह बौद्धिक-ज्ञान नहीं, यह याद रखना चाहिए।

कैसे प्रकाशित करता है? आदित्यवत् – सूर्य की भाँति। जैसे सूर्य के प्रकाश से चकाचौंध हो जाती है, कुछ छिपा नहीं रहता। सभी प्रकट हो जाता है, ऐसे ही भगवान् प्रकट हो जाते हैं। दीपक का प्रकाश नहीं, सूर्य का सा प्रकाश होता है ज्ञान का उजाला।

जिनके भीतर ज्ञान जगता है, वे प्रभु को जान पाते हैं। उनके ज्ञान से दूसरे तो नहीं देख पाते। यह अनुभूति है। व्यक्ति विशेष तक सीमित है। इसीलिये कहा 'उनका ज्ञान' 'तेषां ज्ञानम्'।

तत्परम् – वह पर। वह जो परे है। वह जो अतिगामी – सभी का अतिक्रमण करने वाला तत्त्व है – पुरुषोत्तम है।

क्या कोई दूसरी सत्ता परमसत्ता को प्रकाशित करती है? जैसे दीपक के उजाले से हम पुस्तक देखते हैं, जैसे सूर्य के प्रकाश से हम संसार देखते हैं ऐसा नहीं हो सकता? उसके प्रकाश से ही तो सभी कुछ प्रकाशित है। तो ज्ञान उसे प्रकाशित करता है, इसका अर्थ? ज्ञान उससे अलग नहीं है। उसके प्रकाशित होने का पूर्वरूपमात्र है ज्ञान। ज्ञान तो वह चेतना है जिसमें आत्मा का भान होता है और उसका प्रकाश उसके अनन्तर, उसके उपरान्त जगने वाली भागवती-चेतना है।

भक्त तो भगवान् को ही चाहता है। ज्ञान तो उसे बिना चाहे मिल जाता है। जिन्हें वह प्राप्त हुआ है, उनकी गति क्या होती है? यह बताया जायेगा आगामी श्लोक में। (क्रमश:)

गुरु वाणी

प्रातः उठने के लिये रात्रि के समय जल्दी से जल्दी सोना, शाम का खाना कम कर देना, और यथासम्भव जल्दी खाना, हवादार जगह में सोना, हल्का ओढ़ना रहे, परन्तु ज़रूरत के मुताबिक। सोते समय प्रातः उठ जाने का संकल्प करना और नींद खुलते ही खटिया को छोड़ देना - इतनी बातें होनी चाहिये। आलस्यादि को हम अपने निश्चयात्मक संकल्प के द्वारा भगा सकते हैं। (पत्र 48)

❖ ❖ ❖

6 घण्टे रात्रि में सोकर दिन में आराम करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिये। यदि ज़रूरत ही हो तो आध घण्टा लेट लेने में कोई हर्ज़ नहीं। (पत्र 48)

❖ ❖ ❖

आहार का संयम, दिन भर यथासम्भव मौन रहकर जाप करना, सत्य, मित तथा प्रिय भाषण आदि नियमों का पालन भी परमावश्यक है। (पत्र 48)

❖ ❖ ❖

अखण्ड जाप के लिये कमरा अलग कर डालियेगा। इस कमरे में यदि सम्भव हो तो बात-चीत अथवा काम, सिवा पूजा अथवा स्वाध्याय के, न होना चाहिये। यदि प्रायः पूजा उसी में की जाये तो बहुत अच्छा हो। यदि यह कमरा छोटा रहे तो और भी अच्छा हो। बड़े कमरे को charge करने के लिये नाम की तरंगों के प्रबल प्रभाव से भरने के लिये काफ़ी समय लगता है और यदि कमरे का सामान्य उपयोग किया जाये तो वह पैदा किया हुआ प्रभाव छिन्न-भिन्न हो जाता है। इसलिये उस कमरे का रक्षा-बन्धन आवश्यक होता है। फिर ऐसे लोग जिनका वास्तव में मन जाप के लिये स्वयं उत्साहित न हो, जहाँ तक हो सके, जाप में न बिठालने चाहिये। ऐसे व्यक्तियों के भाग लेने से जाप निर्जीव हो जाता है। अखण्ड जाप भगवान् का प्रेमपूर्वक पूजन है। इसमें बेगारियों का क्या काम? भले ही जाप 4 घण्टे का हो जाये अथवा तीन-तीन बार बैठना पड़े इसकी पवित्रता तो ऐसी ही बनी रहनी चाहिये। यदि हमारी निजी निष्ठा ही ढीली-ढाली हो, तो फल विशेष असम्भव है। यदि ठीक रीति से अच्छे साधक मिलकर अखण्ड जाप करें, तो इतना लाभ एक दिन में हो सकता है जो कि दो महीने की नियमित साधना से। (पत्र 48)

❖ ❖ ❖

Letters to Seekers

Letter No. 7 : Shri Ram : Chitai, Almora

July 17, 1944

My dear ......,

I hope you have already received my previous letter. I received your letter of the 9th just last night. The delay being due to redirecting.

Another Akhand jap is a good news, especially when we are having one today from seven in the morning to seven in the evening.

Yes, irritation and Akhand jap do not agree well together. You could have postponed either for some other occasion. However, you do not seem to realize fully well the importance of my emphasis on an attitude of non-existence in dealing with yourself. The moods have a life of their own. Give them no more lease of life by identifying yourself with the moods and let them wear out. In other words, be a witness as of a thing which is gradually dying out. Do not try to kill it out by the force of will and cause suppression. Do not, either identify yourself with it and perpetuate it. If you assume this attitude, each recurrence will be weaker than the previous and will affect you less and less, till the day (it may actually take many years) when the mood is perfectly dead.

Secondly, try to go to the root of the mood. Why were you upset? There is some blunder somewhere? You think that all have the sensibility that you have developed. What is pleasing to you at present may be actually offensive to others, as perhaps it was even to you some years ago. We pass through various experiences and we change mentally. Time may come when the gents of the house may take keen interest in this side of life but you can hasten the moment by being more tolerant, more loving, more helpful and sympathetic towards them. To try to dominate others, even if they are youngsters, is to invite rebellion against yourself and your ways.

If you want to interest a person in some thing which interests you, you will have to take interest in what interests him. Domineering is the cause of much fever in life. Life should be a race for service, not rights. That is the way to be happy and living.

The training that the gents have received in early age is responsible for their behaviour now. Through great patience alone you can undo it.

Again: Let us learn to put ourselves in the position of the other man. Members of the family are otherwise very good.

You will do well to ponder over what I have written. Revising it at times will also be beneficial.

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

Letter No. 8 : Shri Ram : Uttar Bhawan, Chitai, Almora.

24.07.1944

My dear ......,

Both your letters of the 14th to hand. I hope you have already got one letter from me.

Attraction and repulsion are inherent in the sense organs because evolution is impossible without them. Attraction produces desire, arouses will, stirs up the mind and heart. Repulsion produces aversion, negative desire (that is the desire to escape) and similarly stirs up mind and heart, the latter in a different way. We can well observe that they are on the increase in the march of evolution from stone to man, as the consciousness expands out.

They lead a man to transitory pleasure and pain. Gradually the transitory nature of wordly experience is realised, and the cry for something beyond emerges. Then both are merged in the Aspiration for the Divine. Here the man has entered the path. He wants neither the objects of attraction, nor wants to run away from those of repulsion.

When are they undivine? I do not understand the word. It is all divine here! However, anything that stands in the way of his upward march is not wholesome from that point of view. It may be necessary for the evolution of a particular man to follow the object of attraction, at a particular stage of evolution while not so later on.

Raga and Dvesha are decried because they are the cause of suffering, and secondly before we enter into the peace they must have worked themselves out, (i.e. we must be above them.) The way lies through them. A Sadhak who has already developed them has now to get above them. Without doing this he can not have the balance which is absolutely necessary.

They are of the very scheme of evolution, as much the creation of the One God as any thing else. Without them the universe will fall to pieces – nay, into nothingness. It is so very plain on the physical plane, and so is it on the higher planes.

Now about Rama Nama. Your question is really very interesting. The same sound symbol acquires different potentialities with different persons. This name, as it is with me, causes the descent of Cosmic Power which is invoked in the name and in the person who receives it. This is what it does. It is a matter of first hand observation. It may be doing anything with followers of the other paths, or it may have done anything in the past. That does not matter. All depends upon the capacity to invoke and the invocation.

The descent causes ascent, the two begin to co-mingle and in this going up and down, the two not only make the body pure, with the electric fire of prana, they wash clean the heart and intellect, until comes perfect balance between the two (Shakti & Mahashakti) which is the end. It gives balance in life and within an indescribable state of Samadhi.

Cosmic Shakti is the Kinetic aspect of the Lord, and it descending nothing remains. The Mahashakti descends according to the immediate capacity of the sadhka to bear the burden. It is the kind mother who will not harm the child. The gradual descent, however small, prepares the way for further descent. The inrush also depends upon how much we are ready to surrender to HER. The name causes a new evolution. The visualizing faculty is brought to a stand still.

So much for the present.

With sincere regards,

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

If you want to interest a person in something which interests you, you will have to take interest in what interests him. Domineering is the cause of much fever in life. Life should be a race for service, not rights. That is the way to be happy and living.

– Ramanand Ji

सरल जीवन ही सच्चा ज्ञान है

ऐसा लगता है कि बड़ी-बड़ी ज्ञान की बातों में उलझकर मनुष्य सहज और सरल जीवन को खो बैठता है। जैसे संसार की उलझन है, वैसे ही यह भी है। सरलता और सच्चाई से जीवन बिताना ही तो ज्ञान है। बहुत से दृष्टान्त याद कर लेना, बहुत से भजन याद कर लेना, यह तो दिमाग पर बहुत बड़ा वजन लादना हुआ। जिन्हें प्रवचन करना हो उनके लिये यह बात है। अपनी मुक्ति के लिये बहुत से शास्त्र पढ़ने की जरूरत नहीं, गीता के किसी एक श्लोक को ही जीवन में उतार लेने से ही काम बन जाता है। स्वामी विवेकानन्द कहा करते थे कि जो पाँच परखे हुए विचारों को आत्मसात् करके अपना जीवन गठन करता है, वह उस व्यक्ति से श्रेष्ठ है, जिसने पूरा ग्रन्थालय कण्ठस्थ कर लिया है। मैं अपने गुरु से कहता था कि मुझे यह ग्रन्थ पढ़ना है, वह ग्रन्थ पढ़ना है, तब वे कहते थे कि 'बेटा! पूरा समुद्र तू थोड़े पी सकेगा। सच्चाई से जीवन बिता, भगवान् का नाम ले, सबके प्रति सद्भावना रख और अपने धर्म का पालन कर। बस, इतने से ही तू भवसागर पार हो जायगा।'

एक व्यक्ति स्वामी विलासानन्द जी के पास आया और बोला कि स्वामी जी! एक पुस्तक लिखना चाहता हूँ, तब स्वामी जी बोले पहले से क्या कम पुस्तकें हैं, जो तुम और बोझ बढ़ाना चाहते हो। गीता है, रामायण है, वेद हैं, पुराण हैं – इनमें से कोई एक ही पढ़ लो तो कल्याण हो जाये।

शास्त्र पढ़ने से हमारा कोई विरोध नहीं, परन्तु इसकी अत्यधिक वासना थका देती है। श्री उड़िया बाबा जी महाराज कहते थे कि 'शास्त्रों के जंगल में मत भटको।' कभी-कभी बहुत बड़ी-बड़ी ज्ञान की बातों में उलझ जाने के कारण हम यह भूल जाते हैं कि हमारे लिये कौन-सी एक-दो बातें हैं, जो हम जीवन में उतारकर अपना कल्याण कर सकें।

कठोपनिषद में यह आया है कि –

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्य-
स्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूँ स्वाम्॥

यह आत्मा केवल प्रवचन से नहीं मिलता, न मेधा से और न बहुत सुनने से, बल्कि यह जिसका वरण करता है, उसके आगे अपना रहस्य प्रकट कर देता है।

शंकराचार्य भगवान् ने इसका भाष्य लिखते हुए यह कहा है कि केवल आत्म-लाभ के लिये प्रार्थना करने वाले का ही यह आत्मा वरण करता है।

कबीर, सूर, नानक, मीरा, रैदास आदि सन्त ज्यादा पढ़े-लिखे न थे, परन्तु ये सब भगवत्-प्राप्त व्यक्ति थे। आज सारा संसार इनको श्रद्धा से सिर झुकाता है।

भगवान् शंकराचार्य विवेकचूड़ामणि नामक ग्रन्थ में लिखते हैं –

वाग्वैखरी शब्दझरी शास्त्रव्याख्यानकौशलम्।
वैदुष्यं विदुषां तद्वद् भुक्तये न तु मुक्तये॥

वाणी का कौशल, शब्दों का चमत्कार, शास्त्र की व्याख्या करने का कौशल – यह सब विद्वानों का मनोरंजन है, इसका मोक्ष से सम्बन्ध नहीं है।

वाचिक ज्ञानी मत बनो, बात को सही समझो एवं अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाओ। एक साधु की डायरी देखी तो उस में सिर्फ 'राम' नाम लिखा था, बाकी कुछ भी नहीं।

राजा पृथु ने अन्त में प्रजाजनों को उपदेश देते हुए कहा कि अपने धर्म का पालन करो एवं भगवान् को याद करो। बस, इतने से ही कल्याण हो जायेगा। गीता में भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं, अपने स्वाभाविक कर्मो द्वारा भगवान् की पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि ईश्वर प्राप्ति का मार्ग बहुत ही सहज और सरल है, वह तो ज्ञान का अभिमान करने वाले लोग बात को उलझा देते हैं और बड़े-बड़े व्याख्यानों में असल बात छोड़ बैठते हैं। गिद्ध उड़ता आकाश में है, परन्तु नजर मांस के टुकड़े पर होती है, उसी प्रकार बात तो **'अहं ब्रह्मास्मि'** की करते हैं, परन्तु नजर कामिनी-कांचन पर रहती है। जीवन में त्याग आना चाहिये, सच्चाई आनी चाहिये, सरलता आनी चाहिये।

– श्री दिलीप देवनानी जी

(कल्याण पत्रिका, वर्ष 96, संख्या 4 से उद्धृत)

सर्वधर्मान्परित्यज्य

धर्म शब्द का प्रयोग गीता में अनेक स्थानों पर किया गया है किन्तु प्रत्येक स्थान पर सन्दर्भ के अनुसार इस शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थ हैं। आम बोलचाल की भाषा में धर्म शब्द किसी विशेष समुदाय को इंगित करता है, जैसे हिन्दू धर्म, मुस्लिम धर्म, ईसाई धर्म, यहूदी धर्म आदि। किन्तु गीता में धर्म शब्द का इस अर्थ में प्रयोग नहीं हुआ है। गीता का तो प्रारम्भ ही 'धर्म' शब्द से हुआ है –

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।

कुरुक्षेत्र को धर्मक्षेत्र इसलिये कहा गया कि इन्द्र ने कुरु को यह वरदान दिया था कि इस क्षेत्र में जो तप करेगा या युद्ध में मारा जायेगा उसे स्वर्ग की प्राप्ति होगी। सम्भवतः यही कारण रहा होगा कि भगवान् ने अर्जुन को कहा कि इस क्षेत्र में यदि तू युद्ध में मारा भी गया तो तुझे स्वर्ग की प्राप्ति होगी (गीता 2/37)।

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः॥

मनुस्मृति के अनुसार धर्म के दस लक्षण बताये गये हैं –

धृति क्षमा दमोस्तेयं शौचं इन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

अर्थात् जिस व्यक्ति में ये दस लक्षण पाये जाते हैं अथवा जिसने ये गुण धारण किये हुए हैं वह व्यक्ति धार्मिक कहलायेगा चाहे वह किसी भी जाति, वर्ग, समुदाय, देश या लिंग का हो। इस मान्यता के अनुसार जहाँ पवित्र नदियाँ बहती हों, जहाँ परोपकारी या साधु लोग वास करते हों, देवताओं की पूजा अधिक होती हो, मन्दिर अधिक हों, आसुरी स्वभाव के लोग न रहते हों, सुख-शान्ति का वास हो, वे स्थान धार्मिक या तीर्थ-स्थल कहे जाते हैं। भारतवर्ष में तो ऐसे स्थानों की भरमार है।

गीता में धर्म शब्द का प्रयोग अधिकतर स्वाभाविक कर्म और कर्तव्य के अर्थ में किया गया है। इसके अतिरिक्त राष्ट्र धर्म, जाति धर्म, निज धर्म और कुल धर्म भी होते हैं। अध्याय 1 के श्लोक 40 में अर्जुन कहते हैं –

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत॥

कुल के नाश से सनातन कुल धर्म नष्ट हो जाते हैं जिससे पाप में वृद्धि हो जाती है। अध्याय 1 के श्लोक 43 में जाति धर्म नष्ट होने की बात कही गई है तथा उसके परिणाम बताये गये हैं।

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसङ्करकारकैः।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः॥

विडम्बना तो यह है कि जिस कार्य को अर्जुन अधर्म समझ रहा है उसी को भगवान् अर्जुन का निज धर्म बता रहे हैं। भगवान् समझाते हैं कि युद्ध छोड़कर संन्यासी बन जाना, यह क्षत्रिय का धर्म कदापि नहीं हो सकता। अर्जुन मानता है कि वह धर्म और अधर्म का निर्णय करने में पूर्णतः असमर्थ है क्योंकि इस समय वह कायरता रूपी दोष से ग्रसित है (गीता 2/7)।

ज्ञातव्य है कि जाति के अनुसार और परिस्थितियों के अनुसार धर्म की परिभाषा पृथक-पृथक होती है।

एक पतिव्रता स्त्री का धर्म है पति की सब प्रकार से सेवा करना, पुरुष का धर्म है नारी की रक्षा व मान करना, न्यायाधीश का धर्म है अपराधी को दण्ड देना, चाहे अपराधी उसका सगा-सम्बन्धी ही क्यों न हो, धनाढ्य व्यक्ति का धर्म है जरूरतमन्दों की जरूरतें पूरी करना, ब्राह्मण का धर्म है शास्त्रों का पठन-पाठन, क्षमाभाव रखना, सरलता आदि, वैश्य का धर्म है कृषि, पशुपालन वाणिज्य आदि, शूद्र का धर्म है सब वर्णों की सेवा करना।

परिस्थिति के अनुसार धर्म कैसे बदलता है उसके उदाहरण पुराणों में भी मिलते हैं। महाभारत के युद्ध में युधिष्ठिर का झूठ बोलना धर्मानुसार बताया तो अर्जुन के द्वारा निहत्थे कर्ण पर बाण चलाना धर्म बताया। मानस में गोस्वामी तुलसीदास ने भगवान् राम द्वारा ताड़का नामक स्त्री का वध करवा कर धर्म की संज्ञा दी और रावण के यज्ञ का विध्वंस कराना भी न्यायसंगत ठहराया। तात्पर्य यह है कि धर्म की निश्चित परिभाषा करने में बड़े-बड़े विद्वान भी भ्रमित हो जाते हैं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि अपने धर्म से दूसरे का धर्म अच्छा लगने लगता है क्योंकि वह आचरण करने में सुगम है। भगवान् ने ऐसी मानसिकता की भरपूर भर्त्सना करते हुए कहा है कि दूसरे के धर्म से गुणरहित भी अपना धर्म उत्तम है। अपने धर्म में तो मरना भी अच्छा बताया गया है (गीता 3/35)।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥

प्रकृति के सभी तत्त्वों के अपने-अपने गुण धर्म होते हैं, वे उनको कभी नहीं छोड़ते जैसे अग्नि का धर्म है उष्णता, पृथ्वी का गन्ध, चन्द्रमा का शीतलता, वृक्ष का छाया आदि। राजा का धर्म है प्रजा की रक्षा करना, न्याय करना, प्रजा का पालन-पोषण करना, दुष्टों को दण्ड देना, निजी स्वार्थ का त्याग करके जनहित में निर्णय लेना और उनको लागू करना। इसीलिये भगवान् ने अर्जुन को कहा – क्षत्रिय के लिये धर्मयुक्त युद्ध के अतिरिक्त अन्य कोई कल्याणकारी कर्तव्य नहीं है (गीता 2/31)।

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।
धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते॥

तथा इस धर्मयुक्त युद्ध को नहीं करेगा तो स्वधर्म को खोकर पाप को प्राप्त होगा (गीता 2/33)।

अथ चेतत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥

आश्रम के अनुसार भी धर्म बदलते हैं। शास्त्रों में मनुष्य जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया गया है – प्रथम पच्चीस वर्षों तक विद्या का अर्जन करना ही मानव का धर्म बताया गया है क्योंकि शेष जीवन इसी पर आधारित है। इसको ब्रह्मचर्य आश्रम कहा गया है। 25 से 50 वर्ष की आयु तक जीवन की वास्तविक कार्य अवधि है। इस अवधि में अपनी अर्जित विद्या के आधार पर धन का अर्जन करना, उसका सदुपयोग करना, विवाह करना, परिवार का पालन-पोषण करना, माता-पिता की सेवा करना, अतिथि-सेवा आदि करना – यही धर्म है। इसको गृहस्थाश्रम कहा गया है।

50 से 75 वर्ष की आयु में समाज की सेवा को प्राथमिकता देकर सामाजिक ऋण से मुक्त होना ही धर्म है और 75 के बाद शेष जीवन भर आत्म-कल्याण के पथ पर अग्रसर होना ही धर्म है। आगामी जीवन में कहाँ जाना है, क्या साथ ले जाना है, इसका विचार करना, संसार से विरक्त हो जाना ही धर्म है।

स्पष्ट है कि भगवान् ने गीता में धर्म को कर्तव्य का पर्यायवाची बताया है और कर्तव्यपालन को ही कर्मयोग का आधार बताया है। किन्तु गीता के अन्त में अध्याय 18 के श्लोक 66 में जो सब धर्मों को त्यागने की बात कही गई है वह उपरोक्त धारणा का अपवाद प्रतीत होता है।

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

विचारणीय है कि यहाँ भगवान् किस धर्म को त्यागने के लिये कह रहे हैं? इस विषय में विद्वानों के विभिन्न मत हैं जो जिज्ञासु साधकों को भ्रमित भी करते हैं। उन मतों का अध्ययन व विश्लेषण करके मैं अपनी अल्प बुद्धि से इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि –

निस्सन्देह सभी लोगों को अपने अपने वर्ण, समय, आश्रम तथा परिस्थिति के अनुसार अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना ही है, परन्तु जो साधक श्लोक 3.17 के अनुसार आत्मा में ही रमण करने वाला, आत्मा में ही तृप्त और आत्मा में ही सन्तुष्ट हो अथवा श्लोक 6.25 के अनुसार परमात्मा के अतिरिक्त और कुछ भी चिन्तन न करता हो, उसके लिये कोई कर्तव्य नहीं है।

इसके अतिरिक्त जो साधक संन्यास आश्रम में प्रवेश कर चुके हैं और सभी सांसारिक कर्तव्यों से मुक्त हो चुके हैं, उनके लिये तो भगवान् की इस उक्ति को निर्देश ही माना जा सकता है जिससे कि वे सांसारिक मोह से मुक्त होकर अपने जीवन के शेष समय को ध्यान के माध्यम से आत्मदर्शन या ईश प्राप्ति की ओर अग्रसर होने में लगा सकें।

इस प्रकार अपने-अपने धर्म का पालन करते हुए जीवन के अन्त समय में गीता के अध्याय 18 श्लोक 62 का चिन्तन करते हुए परम धाम को प्राप्त करने की पात्रता प्राप्त करें –

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्॥

हे भारत! तू सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही शरण में जा। उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। सब प्रकार से शरण में जाने का अर्थ है – अनन्यभाव से अतिशय श्रद्धा, भक्ति और प्रेमपूर्वक निरन्तर भगवान् के नाम, गुण, प्रभाव का चिन्तन करना और उनके आज्ञानुसार निःस्वार्थ भाव से केवल परमेश्वर के लिये आचरण करना।

– रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'

स्वामीजी के वचन

जब तक परिस्थिति में, दूसरों में दोष ढूँढने की और उनकी गलती से स्वयं सन्तोष पाने की वृत्ति है तब तक व्यक्ति अन्तर्मुख नहीं हुआ, अभी वह पूरी तरह से साधक भी नहीं बना। साधक को तो अपने भीतर देखना है और जो भी उसकी दृष्टि अन्तर्मुखी करने में सहायक होता है उसका धन्यवाद करना है। यहाँ अगर-मगर कुछ नहीं। दुनिया बहती है तो बह जाये और भाड़ में जाती है तो जाये। यह साधना का अटूट नियम है।

– स्वामी रामानन्द

मैं का भाव हटाओ

निर्मानमोहा जितसंगदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वंद्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढ़ा पदमव्ययं तत्॥

अर्थात् जिनका मान और मोह नष्ट हो गया है, जिन्होंने आसक्ति रूप दोष को जीत लिया है, जिनकी परमात्मा के स्वरूप में नित्य स्थिति है और जिनकी कामनायें पूर्ण रूप से नष्ट हो गई हैं – वे सुख-दु:ख नामक द्वन्द्वों से विमुक्त ज्ञानी जन उस अविनाशी परमपद को प्राप्त होते हैं। (गीता 15.5)

यहाँ पर शरणागति का अत्यन्त सुन्दर वर्णन हुआ है। इसके लिये प्रथम योग्यता यह होनी चाहिए कि मिथ्या अहंकार से मोहित न होना। क्योंकि जीव अपने को प्रकृति का स्वामी मानकर गर्वित रहता है, अत: उसके लिये भगवान् की शरण में जाना कठिन होता है। शरीर में मैं-मेरापन होने से ही मान, आदर, सत्कार की इच्छा होती है। शरीर से अपना सम्बन्ध मानने के कारण ही मनुष्य शरीर के मान आदर को भूल से स्वयं का आदर मान लेता है और फंस जाता है। जिन भक्तों का केवल भगवान् में ही अपनापन होता है, उसके शरीर में मैं-मेरापन नहीं रहता; अत: वे शरीर के आदर से प्रसन्न नहीं होते। **निर्मानमोहा, जितसंगदोषा, विनिवृत्तकामाः** – ये साधक के लक्षण हैं। जो अव्यय पद की प्राप्ति है वह साध्य है। **अध्यात्मनित्या** साधन है।

जो मान मोह की दलदल से निकल गया है वह अमूढ़ है। दलदल से एक पैर निकालते-निकालते दूसरा पैर फंस जाता है। मान और मोह का अर्थ 'देह' को मैं मानना है, देह के सम्बन्धियों को मेरा मानना मोह है। जो मान-अपमान होता है वह देहगत दृष्टि से है, आत्मा की दृष्टि से नहीं। जो देह से ऊँचा उठ जाता है उस पर मान अपमान का प्रभाव नहीं होता। सन्त कहते हैं – जो तुम्हारी निन्दा करता है उसे अति निकट रखो, उसका आदर करो क्योंकि जो पाप-पुण्य होते रहते हैं, निन्दक उन पापों को खा जाते हैं, प्रशंसक पुण्यों को खा जाते हैं। कोई किसी की निन्दा करता है तो वह निन्दित कार्य का भागीदार भी हो जाता है। निन्दा करके दूसरों के पाप को अपने ऊपर लिया जाता है। फिर हम ऐसा क्यों करें? जीवन में अपने ही पाप कर्म इतने होते हैं कि उनके कर्मों का भोग समाप्त हो जाये तो गनीमत है।

देह को 'मैं' मानने पर मान होता है, देह को मेरा मानने पर मोह होता है। यह देह गन्दी नाली की तरह है। यदि कोई गन्दी नाली में लेट जाता है एवं किसी ने ऊपर से गन्दा पानी गिरा दिया तो यह दोष गन्दा पानी गिराने वाले का नहीं, बल्कि नाली में लेटने वाले का है। दु:ख का तमाचा लगा कर भगवान् सचेत कर देता है कि इस देह में बैठकर देह की चिन्ता में ही लगे हो।

पूजा, प्रतिष्ठा, सम्मान – ये सब मान के ही रूप हैं। पूजा, प्रतिष्ठा से विक्षेप होता है। मान से अहंकार होता है। अमान पर यानी परमतत्व पर दृष्टि चली जायेगी तो अहंकार नहीं होगा। जिस देह पर मान करते हो उसके अंगों की उपमा पशुओं से दी जाती है। एक मनुष्य के अंग की उपमा दूसरे मनुष्य के अंग से नहीं दी जाती। जिस देह की उपमा पशुओं से दी जाती हो उसका मान करना भ्रम ही है।

इस देह के ऊपर का आवरण हटा दिया जाये तो इसकी सुन्दरता की पोल खुल जाती है। देहासक्ति से ही देह के सम्बन्धियों में आसक्ति होती है। अभिमान परिच्छिन्न वस्तु में होता है, अपरिच्छिन्न से नहीं। परिच्छिन्न का अर्थ जिसका सम्पर्क चारों ओर से

घिरा हो। यह देश, काल, वस्तु से परिच्छिन्न है। इस कफ, वात, पित्त प्रधान देह से 'मैं' का भाव हटाना चाहिए।

भगवान् ने कहा मान एवं मोह से मुक्त हो जाओ, जहाँ मान होगा वहाँ पूर्णता नहीं आयेगी, मानी पुरुष अपूर्ण रहता है। मान ज्ञान का भी विरोधी है। जहाँ मान नहीं होता वहीं ज्ञान होता है। विवेकी पुरुष मान अपमान से ऊपर उठ जाता है। जिसकी बुद्धि देह को मैं मानने लगी है उसी को मान रहता है। मान अपमान देह का होता है।

सत्संग में जाकर श्रवण करो, बाद में मनन करो। ज्ञान के पूर्ण विरोधी मान को छोड़ा तो माया टकरा जाती है। इससे छुटकारा पाने के लिये असंग होना पड़ता है जिससे माया का प्रभाव नहीं होता। यह परमार्थ का मार्ग समूह के साथ जाने के लिये नहीं। यह मार्ग अकेले का है। इस मार्ग में संग को, राग को दूर करना है। परमार्थ मार्ग में जो राग की निवृत्ति कर दें वही सच्चे साथी हैं चाहे वे गुरु हों या अन्य कोई हो। परमार्थ आसक्ति मिटा सकता है।

पुमांश्चरति निःस्पृहः

इस संसार में निस्पृह होकर रहो। ऊपर का नाटक अच्छा करो, व्यवहार अच्छा करो लेकिन अन्दर से चिपको मत। इतने बड़े संसार में कुछ परिचित लोगों में स्पृहा होती है और बाकी सब में हम निस्पृह होते हैं। भगवान् ने दूसरी बात कही है – संग दोष से रहित होकर रहो। अपने सन्तोष के लिये अपने से भिन्न की जब आवश्यकता होती है तभी दुःख होता है।

मोह-रहित, मान-रहित होने के लिये भगवान् ने साधन बताया है – **अध्यात्मनित्या** यानी महापुरुषों का संग करो, भजन करो, स्वाध्याय करो।

चाखा चाहे प्रेम रस, राखा चाहे मान।
एक म्यान में खड्ग दो, देखे सुने न कान॥

दोनों चीजें एक साथ नहीं हो सकती हैं। मान प्रेम का भी बाधक है। भगवान् से प्रेम भी हो जाये, अपना मान भी रहे, यह सम्भव नहीं। मान, अभिमान, बल अभिमान, विद्या अभिमान – इसमें कोई भी अभिमान रहे तो मनुष्य दूसरे को अपने से निकृष्ट समझता है। कोई अभिमान रहे ही नहीं तो वहाँ ज्ञान रहेगा।

मोह विचार को नष्ट कर देता है। मोह में अन्याय की प्रवृत्ति हो जाती है क्योंकि उसको अन्याय भी अन्याय प्रतीत नहीं होता।

– रमना सेखड़ी

कर्म

कर्म हमारे प्रभु की, विकास के अधिष्ठाता की कार्यविधि है।

हमारे विकास के हितार्थ वह स्वयं दिन रात अथक कर्म करता रहता है। कर्म ही विकास की प्रणाली है। वह कर्म करता है और दूसरे भी कर्म करते हैं। इस प्रकार यह विकास का शिक्षालय कर्म से गुंजायमान है। प्रभु के क्रिया-कलाप के अभाव में यहाँ मृत्यु जैसा सन्नाटा छा जायेगा। अभिवृद्धि असम्भव हो जायेगी। कर्म के बिना यह सृष्टि और अस्तित्व का लोक क्रियाविहीन विस्मृति के अन्धकार में डूब जायेगा।

मनुष्य को बहुत हद तक अपने कर्मों का चुनाव करने का विशेष अधिकार है। परन्तु यदि उसे विकसित होना है तो उसे कर्म करना ही होगा। क्रिया में गहनता के साथ-साथ अनुभव की सम्पन्नता बढ़ेगी और विकास की गति भी। जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाने से गति भी तीव्रतर होती है। यह बिल्कुल स्पष्ट है।

प्रमाद मनुष्य को कर्मत्याग का प्रलोभन दिखाता है। परन्तु क्रियाहीनता से जड़ता आती है अर्थात विकास शून्य हो जाता है। भविष्य में इसका फल

होता है आध्यात्मिक मृत्यु। इस प्रकार आप अपनी सम्पूर्ण मानवता को खो देंगे। कर्म (अर्थात् कर्तव्य) के परित्याग से आप स्वयं को और समाज को, जिसमें आप रहते हैं, नष्ट कर देंगे। सचेत हो जाइये, यह साधुता का लक्षण नहीं है, यह आलस्य है जो आपको हाथ पर हाथ रक्खे हुये बैठे रहने का प्रलोभन देता है।

कर्म को बन्धन मानना भूल है। कर्म तो प्रसन्नता है, यह अभिवृद्धि है, कर्म नहीं है जो बन्धन का कारण है। यह फल की कामना है जो बाँधती है। कर्म मनुष्य को नष्ट नहीं करता, यह चिन्ता है जो विनाश करती है। कर्म दु:ख का कारण नहीं बल्कि उसकी आसक्ति दु:खदायी है। अत: कर्म से आप क्यों भय खाते हैं? कामना और आसक्ति का अतिक्रमण करिये। पुरस्कार की आशा के ऊपर उठिये।

कैसी दुविधा है? कर्म के साथ कामना का आगमन होता है। छाया की भाँति आशा कर्म का अनुसरण करती है। हम इनका परित्याग कैसे कर सकते हैं? कर्म करते हुये हम इनसे छुटकारा नहीं पा सकते और कर्म तो हमें करना ही पड़ता है, कर्म ही इनके ऊपर उठने का मार्ग है। बिना कर्म किये आप इनके ऊपर नहीं उठ सकते। इनके (कामना और आशा के) उदय होते ही इन्हें पहचानिये। भली भाँति समझ लीजिये कि ये दु:ख की जननी हैं। जान लीजिये कि इनको जाना ही है क्योंकि आप इनको भगाना चाहते हैं। कर्म कीजिये क्योंकि यह कर्तव्य है। समाज के कल्याण के लिये कर्म कीजिये। आपके कर्म का विशेष मूल्य है यह बात ध्यान में रखिये। यह धीरे-धीरे कामना और आशा का स्थान ग्रहण कर लेगा। परन्तु आपको दृढ़तापूर्वक कर्म करते चलना है। कर्म से चरित्र का निर्माण होता है। जब तक व्यवहार में न बरता जाये, विचारों और भावनाओं का प्रभाव क्षीण रहता है। तब तक ये निराधार और प्रभावहीन रहता है।

कर्म से संकल्प की जागृति होती है। इससे बुद्धि का व्यायाम होता है। इस प्रकार यह हमारे भाव-जगत को क्रियाशील बना देता है। आलस्य नैतिक पतन करता है। आलस्य को आध्यात्मिकता से सम्बद्ध करने वाले भूल करते हैं। एक विशाल आध्यात्मिक प्रासाद के निर्माण के लिये महान परिश्रम की आवश्यकता है। इसकी माँग है गहन व्यावहारिक क्रिया की।

व्यक्ति के सचेतन आत्म-प्रयास के लिये, उसके विकास की प्रगति के लिये क्रियात्मक जीवन से अवकाश ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं है। जीवन हमारी साधना का क्षेत्र है। क्रियात्मक जीवन से संन्यास का अर्थ है साधना का परित्याग। जीवन स्वयं एक अविराम साधना है परन्तु उसी दशा में जब उचित रीति से इसे स्वीकार किया जाये। जीवनयापन एक कला है। सम्यक् जीवन से हमारी प्रगति तीव्र होती है। मौलिक रूप से आध्यात्मिकता का अर्थ है जीवन का सम्यक् ज्ञान और उसकी समुचित स्वीकृति। इसका अर्थ है जीवन का समुचित निर्वाह। इससे हमको जीने की कला की शिक्षा मिलती है।

कर्म पूजा है। इस पूजा का महत्व बढ़ जाता है यदि कर्म विकास के अधिष्ठाता के लिये किया जाये। वह आपके प्रेमपूर्ण परिश्रम की भेंट स्वीकार करेगा। भगवदर्थ कर्म करते हुये आप कामना और आशा से मुक्त हो जायेंगे। उसके लिये कर्म करने से आपमें सन्तुलन की वृद्धि होगी। उसको कर्म समर्पित करने से आप ईश्वरीय प्रेम से पवित्र हो जायेंगे। उसके हेतु कर्म कीजिये और वह आपको पूर्ण रूप से अपना लेगा। आप उसके हो जायेंगे और उसका निवास आपमें हो जायेगा जैसा आपका उसमें। उसके लिये कर्म करें तो आपको भागवती चेतना की उपलब्धि होगी।

निश्चित ही कर्म विकास का मार्ग है।

– स्वामी रामानन्द जी

पूज्य साहू जी का जीवन चरित्र

द्वितीय भाग

साधना परिवार के सभी भाई-बहनों को मेरी राम-राम !

कहा जाता है कि जन्मों-जन्मों के अच्छे संस्कारों के संचित होने पर ही किसी दिव्य आध्यात्मिक सन्त के कोटे में आने की योग्यता बन पाती है जो ऊपर से निर्धारित होता है और तभी गुरु शिष्य को खोजते-खोजते उसके द्वार तक आ जाता है या शिष्य खोजते-खोजते अपने गुरु के पास पहुँच जाता है। शायद यही सब चरितार्थ हुआ पूज्य साहू जी के साथ भी। सन् 1942 में गुरुदेव के साथ पहली मुलाकात में जहाँ साहू काशीनाथ ने उनको अहंकारवश बिल्कुल महत्त्व नहीं दिया वहीं बाद में वही साहू काशीनाथ गुरुदेव की चुम्बकीय शक्ति एवं व्यक्तित्व से खिंचे चले गये तथा गुरुदेव से दीक्षा लेकर अपना तन, मन, धन और अहंकार सदा के लिये उनके चरणों में समर्पित कर दिया।

इसके बाद तो हर क्षण, हर पल जैसे पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य को अनुभव करने लगे। पूज्य साहू जी की सरलता, मन की निर्मलता और निरहंकारिता के कारण ही शायद गुरुदेव को अपने अनूठे क्रान्तिकारी आध्यात्मिक सन्देशों को प्रसारित करते के लिये जिसकी खोज थी वह पूज्य साहू जी के रूप में गुरुदेव को मिल चुके थे। जैसे श्री रामकृष्ण परमहंस जी के एक निकटस्थ शिष्य मास्टर-M (श्री महेन्द्रनाथ गुप्त) परमहंस जी के साथ हमेशा रहते थे और वे जो बोलते थे, मास्टर जी लिखते रहते थे, जिसको बाद में पुस्तकों के रूप में प्रचार-प्रसार के लिये उपयोग किया गया। इसी तरह पूज्य साहू जी गुरुदेव से पूरी तरह जुड़ चुके थे और गुरुदेव की विचारधारा का उनके पत्रों, पत्रिकाओं और पुस्तकों के माध्यम से भरपूर प्रचार-प्रसार किया।

अब शिविरों का सिलसिला चल निकला। पहला शिविर राजसी शिविर था जो पीलीभीत के घने जंगल में सब सुख-सुविधाओं के साथ सन् 1943 में टैंटों में रखा गया। बाद में संशोधित रूपरेखा के साथ दूसरा शिविर सन् 1944 में बोहरा जी के अतिथिगृह (गैस्ट हाउस) स्याही देवी शीतला खेत, अल्मोड़ा में फलों के बगीचों के बीच रखा गया।

गुरुदेव से प्रथम भेंट का संक्षेप में वर्णन पूज्य साहू जी के शब्दों में, ''सन् 1942 में मैं अपने भतीजे राधावल्लभ जी के यहाँ बैठा था, तभी देखता हूँ कि श्री राम दत्त जी जोशी (जिन्होंने हमें बचपन में पढ़ाया भी था) एक नवयुवक साधु के साथ चले आ रहे हैं। साधु गौरवर्ण, दाढ़ी बढ़ी हुई तेजस्वी एवं प्रसन्न शान्त मुखमण्डल वाला। साधुओं से प्राय: मैं दूर ही रहता हूँ एवं उस वेश (गेरुआ) को देख वितृष्णा सी होती थी। देखते ही उस बच्चा साधु को देख हँसी सी आ गई, वे भी मुस्करा दिये और वो मुस्कान अन्दर तक समा गई। जाने के बाद रात के प्रवचन पर उन्होंने स्वयं बुलवाया। मैं इच्छा न होने पर भी गया। प्रथम राम नाम जपते हुए ध्यान का आदेश हुआ। मैं तो बचपन से ही कृष्ण भक्त था अत: यह आदेश की जिम्मेदारी मेरे पर न थी ऐसा मैंने सोचा। ध्यान के बाद प्रवचन प्रारम्भ हुआ। प्रचवन की हर बात अन्दर तक उतर रही थी। प्रवचन अन्य साधुओं से बिलकुल अलग एवं आधुनिक विज्ञान के तर्क की तुला पर खरा उतरता प्रतीत हो रहा था।

दूसरे दिन स्वामी जी पीलीभीत के लिये रवाना

हो गये जहाँ उन्हें बाबू राम बहादुर जी के यहाँ ठहरना था।

उस दिन रात भर मुझे नींद नहीं आई। रह-रह कर लगता मानो कुछ अतिप्रिय वस्तु खो गई हो। बड़ी बेचैनी थी। सुबह उठते ही मुँह से निकला कि किसी आवश्यक कार्य हेतु पीलीभीत जाना है। रास्ते भर केवल वही मुखमण्डल आता रहा, जो मैं अपने अहंकार वश नकारता रहा। पीलीभीत पहुँच कर कदम स्वत: बाबू राम बहादुर जी के यहाँ ले गये। एक बड़े से कमरे में स्वामी जी बैठे किसी से बात कर रहे थे। मुझे देखते ही उनके चेहरे पर वही चिरपरिचित मुस्कान आ गई।

बड़े प्यार से उन्होंने अपने नजदीक बिठाया और मिठास भरे स्वर में कहा, 'आखिर तुम आ ही गये'। मैं लज्जा से सिकुड़ गया। सकुचाते हुए मैंने अपनी रात्रि की स्थिति के बारे में बताया। कहने लगे – सीधे बैठ जाओ और आँखें बन्द कर लो, सब ठीक हो जायेगा। उन्होंने अपना हाथ मेरे सिर पर रख दिया। उसके बाद जो हुआ वो वर्णनातीत था। क्यों न हो जीवन के सर्वोत्तम सौभाग्य जो है वो स्मृति। मेरे मित्र बाबूराम जी की वह कविता याद आती है – निराला साकी, अजब प्याला, पिलाता है आँख बन्द करके।''

अब शिविरों के आयोजनों का क्रम तेजी से चल निकला। वर्ष में लगभग 6 शिविर, बरुआ सागर, हरिद्वार, स्याही देवी, नरौरा (बुलन्दशहर), दौराला (मेरठ), संगम (त्रिवेणी) इलाहाबाद आदि स्थानों पर लगने शुरु हुए। बीच-बीच में नये स्थानों पर भी व्यवस्था होने एवं गुरुदेव की स्वीकृति के बाद शिविरों का आयोजन होता था। काफी शिविरों में पूज्य साहू जी एक-दो दिन पहले शिविर स्थल पर पहुँच कर शिविर की व्यवस्था में सहयोग करते एवं गुरुदेव का सान्निध्य प्राप्त करते।

अब गुरुदेव के सम्पर्क में अधिक समय व्यतीत होने लगा जिससे आगे की योजना एवं अन्य व्यवस्थाओं के बारे में विचार होता। इसका परिणाम यह हुआ कि जमींदारी के कार्यों में समय कम लगाकर अध्यात्म में अधिक लगने लगा। गुरुदेव के साधकों का गुरुदेव से पत्राचार का माध्यम भी मार्फत साहू काशीनाथ जी, पोस्ट बीसलपुर, जिला पीलीभीत हो चुका था। अब तक साधकों की संख्या बहुत बढ़ चुकी थी। उनके पत्रों को, जो बड़ी संख्या में होते थे, गुरुदेव के उस समय के पते पर पुन:प्रेषित (re-direct) करना भी एक बड़ा काम था। गुरुदेव का पता हर 10-15 दिन में बदलता रहता था। क्योंकि वे पूरे देश में यात्रा करके अपनी आध्यात्मिक धारा का अमृत पान जन-साधारण को करवाने में व्यस्त रहते। पत्रों के माध्यम से ही उनकी पारिवारिक एवं आध्यात्मिक समस्याओं का समाधान करते और इसमें बीसलपुर कार्यालय अहम् भूमिका निभा रहा था।

उपरोक्त कारणों से पूज्य साहू जी अपने परिवार, बच्चों, जमींदारी के कार्य एवं अन्य आवश्यक कार्यों को समय बहुत कम दे पाते। गुरुदेव के आने पर देर रात विचार विमर्श सत्संग ध्यान आदि चलता।

इस सबके कारण हमारी माता जी (श्रीमती सरस्वती देवी जी) क्षुब्ध रहने लगीं, उनका रुझान अध्यात्म में कम ही था। सन् 1944 में मेरे भाई बृजेश चन्द्र एवं सन् 1946 में मेरी बहन सुबोधिनी जी भी इस संसार में आ चुके थे। चार बच्चों को पालना ऊपर से घर-गृहस्थी का पूरा काम, खिन्न होना स्वाभाविक भी था। इसके साथ ही साथ जो समय आध्यात्मिक गतिविधियों से बचता था वह मुकदमे बाजी एवं जमींदारी के कार्य के कारण घर से बाहर रहना पड़ता था। इस सबके कारण परिवार में बहुत समस्यायें आने लगीं।

एक दिन पूज्य साहू जी (पिता जी) बहुत परेशान

हो गये और गुरुदेव के आगे चरणों में गिर कर बोले गुरुवर या तो मुझे भी छोड़ दो या मेरी पत्नी श्रीमती सरस्वती जी को भी उतना ही अपना लो जैसा मुझे। यह जीवन की गाड़ी दो पहियों से चलती है। एक पहिये से मैं अधिक समय तक आपके साथ शायद न चल सकूँ। प्रत्येक प्राणी के अपने संचित संस्कार होते हैं एवं अपनी पूर्व की यात्रा होती है। शायद उस स्तर की पिछली यात्रा माता जी की न रही होगी। अब हम देखें कि कैसे अपने प्रिय शिष्यों के लिये गुरु किस स्तर तक जाकर चाहे नियम के विरुद्ध ही क्यों न हो, प्रेम एवं करुणावश सहायता करने के लिये आगे आता है।

गुरुदेव ने सब गम्भीरता से सुना (असल में उस दिव्य दृष्टि सन्त से क्या छिपा था), समर्पण की एवं अपने को पूर्ण खोलने की परीक्षा पूर्ण हुई। गुरुदेव बोले उसको मेरे पास ऊपर जाप वाले कमरे में भेज दो। (हमारे यहाँ गुरुदेव के आगमन के बाद से ही पहिली मंजिल पर एक ध्यान कक्ष बनाया गया था जिसमें पिता जी नियमित ध्यान करते थे और गुरुदेव के आने पर वे भी साथ में ध्यान करते थे।) ध्यान कक्ष के बगल वाला कमरा गुरुदेव के रहने के लिये सुरक्षित था जो केवल उनके आने पर ही सफाई करके खोला जाता था। इस कमरे के बगल में एक काफी बड़ा कमरा (हॉल) था जिसमें बैठकर गुरुदेव प्रवचन देते थे।

थोड़ी देर में माता जी ऊपर आईं, उनको ध्यान कक्ष (जाप वाले कमरे) में बैठने के लिये कहा गया। पिता जी गुरुदेव वाले कमरे में बैठे थे। उस युग में एक महिला कमरे में अकेली हो सोच कर माता जी काँप गईं। थोड़ी देर में गुरुदेव अन्दर आये और दरवाजा भेड़ दिया और माता जी के सामने बैठ गये। माता जी को आँखें बन्दे करने को कहा। यह सब देख माता जी सिहर गईं। जब गुरुदेव ने माता जी के सिर पर हाथ रख दिया और लाज से सिकुड़ सी गईं। फिर वह विलक्षण घटना घटित हुई जिसके लिये लोग जन्मों-जन्मों तक भटकते रहते हैं।

माता जी के ही शब्दों में ऐसा लगा कि जैसे किसी संकरे पात्र में ऊपर से जल डाला जाये तो वह गुट-गुट की आवाज के साथ अन्दर तली में बैठने लगता है। इसी तरह वह दिव्य शक्ति बड़े वेग से अन्दर जा रही थी।

और गुट-गुट की आवाज महसूस हो रही थी। विलक्षण बात है कि यह प्रक्रिया लगातार लगभग 10 मिनट तक चलती रही। जब यह अनुभव होने लगा कि पात्र पूरी तरह भर चुका है तब गुरुदेव ने हाथ हटाया। माता जी की आँखों से निरन्तर अश्रुधारा बह रही थी। उनमें हिलने तक की क्षमता न थी। पर क्या घटित हुआ इसका पूरा संज्ञान था। उस विलक्षण आनन्द को शब्दों में बताना सम्भव नहीं है, केवल अनुभव गम्य है। गुरुदेव सामने शान्त बैठे थे। जब कुछ होश आया तो गुरुदेव के चरणों में स्वतः गिर पड़ीं।

इस घटना के बाद क्या हुआ शायद विश्वास करना सम्भव नहीं है। माता जी की स्थिति उच्च कोटि के साधक जैसी हो गई। गुरुदेव के हर कार्य में पूज्य साहू जी का पूरा सहयोग एवं गुरुदेव के लिये अपार-असीमित प्रेम हो गया। श्रद्धा, भक्ति और विश्वास उच्च स्तर पर पहुँच गये। जीवन में आमूल चूल परिवर्तन हो गया। बाद में जीवन पर्यन्त पूज्य साहू जी के साथ इस पथ पर अग्रसर रहीं।

यहाँ एक बात और याद आती है कि माता जी गुरुदेव से बहुत खुल चुकी थीं। हर बात स्वामी जी से साझा करती थीं। माता जी गुरुदेव से बोलीं महाराज मैं तो केवल गृहस्थी में लगी रहती हूँ, शिविर नहीं कर पाती हूँ। गुरुदेव बोले सरस्वती तू खूब शिविर करेगी चिन्ता मत कर। बाद में जीवन

के आखिर तक माता जी ने दर्जनों शिविर किये।

यहाँ पर यह भी बताना उचित होगा की हमारे सबसे बड़े भाई श्री कृष्ण चन्द्र जी एवं बड़ी बहन श्रीमती कृष्ण कान्ता जी का नाम पिताजी द्वारा रखा गया था, क्योंकि वह अनन्य कृष्ण भक्त थे। अतः दोनों का नाम कृष्ण के ऊपर रखा। यह दोनों भाई बहन गुरुदेव के साथ हमारे बाग में पेड़ों के बीच छिपा छुअम्बर आदि का खेल खूब खेलते थे और गुरुदेव बच्चों के साथ बच्चा बन जाते थे और प्रवचन एवं ध्यान में धीर गम्भीर सन्त। उसके बाद जन्मे भाई बृजेश चन्द्र सन् 1944, बहन सुबोधिनी सन् 1946, भाई प्रदीप चन्द्र सन् 1949 तक का नाम गुरुदेव द्वारा ही रखा गया। मैं अनिल चन्द्र जन्म नवम्बर 1952 गुरुदेव के निर्वाण के समय माता जी के गर्भ में रहा होऊँगा। छोटा भाई राकेश सन् 1958 बाद में आये।

एक और घटना याद आ रही है, पिताजी (साहू जी) हम सब भाई बहनों के कारण बहुत चिन्तित रहते थे। कहते थे महाराज इनका क्या बनेगा। एक दिन गुरुदेव ने कहा कि तू अपनी आध्यात्मिक यात्रा की ओर ध्यान दे। इन सब का चार्ज आज से मेरे पास है और इनका ही नहीं आगे तक के परिवार का जुम्मा मैं लेता हूँ – ऐसे थे हमारे दयालु गुरुवर। उनकी इस बात का अनुभव आज तक मैं मेरे भाई मेरे बच्चे सब स्पष्ट रूप से कर रहे हैं। जो विलक्षण घटनायें जीवन में घट रही हैं उनका बताना असम्भव है। मेरा तो रोम-रोम, कण-कण, खून का एक-एक कतरा गुरुवर का ऋणी है और उनके लिये समर्पित है।

इसी तरह एक अन्य प्रसंग याद आ रहा है। पूज्य साहू जी की छोटी बहन राजकुमारी जी (हमारी बुआ जी) जो बाल विधवा थी उनकी भी बहुत चिन्ता पूज्य साहू जी को रहती थी। जिसके विषय में उन्होंने गुरुदेव को कहा तो गुरुदेव ने कहा देखो, संस्कार तो भोगने ही होंगे, मैं चाहूँगा वह सब इसी जन्म में कट सकें और वह भी कम कष्टों के साथ। आगे गुरुदेव ने बीसलपुर के एसआरएम इंटर कॉलेज के अध्यापक श्री रस्तोगी जी को अपना शिष्य बनाया और उनकी बहन रामकटोरी जी (वे भी बाल विधवा थीं) जो दुनिया की समस्याओं से अनुभव प्राप्त एक दबंग महिला थीं, उनको बुआ राजकुमारी जी की बड़ी बहन बना दिया। फिर क्या था दोनों निश्चिन्त होकर वृन्दावन, हरिद्वार, कभी चार धाम यात्रा ट्रेन द्वारा तीर्थ यात्रा करती थीं, वह भी बेखौफ। पूज्य साहू जी भी इस व्यवस्था से पूर्ण सन्तुष्ट थे। गुरुदेव ने दोनों को दीक्षित तो किया ही था उसके साथ में ध्यान का सम्बल और गुरुदेव की संरक्षता ने उनके जीवन में कष्टों का अनुभव न होने दिया। इसी से सम्बन्धित एक घटना है गुरुदेव अपना चोगा धुलवाने के लिये बहन राजकुमारी को याद करते थे। इससे हमारी माताजी (सरस्वती देवी) गुरुदेव से गुस्सा करती थी कि चोगा धोने का अवसर मुझे दिया जाये। जब वे समझने को तैयार ना हुई तक गुरुदेव ने उन्हें बताया की इसके पीछे बहुत बड़ा कारण है। इस राम नाम से आवेशित इस चोले को धोने से उनके (राजकुमारी जी) बहुत से संस्कार बहुत सुगमता से कट जायेंगे। जिसकी उनको बहुत आवश्यकता है क्योंकि उन पर संस्कारों का बड़ा संचय है। बाद में बुआ जी उच्च कोटि की साधक बन गई थी। ऐसे थे हमारे गुरुवर, उनके चरणों में शत शत नमन।

इस द्वितीय भाग को यहाँ ही समाप्त करके सब भाई बहनों को राम राम करता हूँ।

– अनिल चन्द्र मित्तल

(भाग-3 अगले अंक में)

वार्षिक शिविर-2022 बीसलपुर
(17 से 20 नवम्बर 2022)

बीसलपुर में इस वर्ष का शिविर 17 नवम्बर 2022 से 20 नवम्बर 2022 तक आयोजित किया गया। इस शिविर में लगभग 125 साधकों ने भाग लिया जिसमें से 80 पुरुष व महिलायें कानपुर से आये थे और शेष स्थानीय तथा अन्य स्थानों से आये थे। बीसलपुर के साधकों ने आगन्तुक साधकों के आवास एवं भोजन की अति उत्तम व्यवस्था की हुई थी। इसके अतिरिक्त मन्दिर की सजावट तथा साधना स्थल में बैठने की व्यवस्था तो देखते ही बनती थी। 17 नवम्बर सायंकाल से शिविर आरम्भ हुआ। 17, 18, 19 की रात्रियों में ड्यूटियाँ लगा कर पूरी रात जाप किया गया और 20 की प्रातः में शिविर की पूर्ति हुई। बाहर से आये हुए साधकों को मार्ग का भोजन देकर विदा किया गया।

शिविर की अवधि में प्रातः एवं सायं सामूहिक जाप, दिन में दो बार प्रवचन और शेष समय में भजन कीर्तन चलते रहे। प्रवचनों का सार संक्षिप्त में नीचे दिया जा रहा है।

प्रवचन सार

बहन शशि वाजपेयी जी

गीता के अध्याय 11 के श्लोक 55 की व्याख्या करते हुए बताया कि भक्ति सब सुखों की खान है। भगवान् कहते हैं कि जो केवल एक मेरा आश्रय लेता है, समस्त कर्त्तव्य कर्मों को करते हुए मेरे परायण रहता है, मेरा भक्त है, आसक्ति से रहित है, सम्पूर्ण भूतप्राणियों में वैरभाव से रहित है, वह मुझे प्रिय है।

गुरुदेव भगवान् ने कहा है समुचित मनोवृत्ति से कर्म करना है, साधन सम्मिश्रण से बचना है। जो भोग भगवान् ने दिया है उसे सहज स्वीकार करना है, भोगों के पीछे नहीं भागना है। संसार से भागना नहीं है पर अपना भी नहीं समझना है। संसार में आसक्ति ही दुःख का कारण है। राम के नाते से ही सब नाते हैं, इसलिये किसी से भेदभाव नहीं रखना चाहिये।

ये गुण राम नाम के द्वारा आते हैं, राम नाम पूर्ण साधन है।

बहन कान्ति सिंह जी

गीता के अध्याय 9 के श्लोक 22 का भावार्थ समझाते हुए बताया – भगवान् कहते हैं कि जो अनन्य प्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर को निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से भजते हैं, ऐसे भक्त का योगक्षेम मैं स्वयं प्राप्त कर देता हूँ। अध्यात्म के पथ पर चलने के लिये हमें तीन की कृपा चाहिए – प्रभु कृपा, गुरु कृपा एवं आत्म कृपा। प्रभु की कृपा से हमें सत्संग मिलता है, गुरु कृपा से ज्ञान मिलता है और आत्म कृपा तो आवश्यक है ही क्योंकि स्वयं करे बिना तो कुछ नहीं होता। इसीलिये कहा गया है कि –

करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान।

हमें बार-बार स्वाध्याय करना चाहिये, इससे हमारे अन्दर ग्रहणशीलता आती है।

गीता के अध्याय 7 के श्लोक 21 में भगवान् ने कहा है कि जो सकाम भक्त जिस-जिस देवता को श्रद्धा से पूजना चाहता है उस भक्त की श्रद्धा को मैं उसी देवता प्रति स्थिर करता हूँ।

श्री जगत सिंह जी

प्रभु की अपार कृपा होने पर ही हम सत्संग से जुड़ते हैं। हमारे जीवन का उद्देश्य है सांसारिकता से निकलकर आध्यात्मिकता की तरफ बढ़ा जाये।

गीता के अध्याय 2 के श्लोक 59 में भगवान् कहते हैं कि इन्द्रियों के द्वारा विषयों को ग्रहण न करने वाले पुरुष के भी केवल विषय तो निवृत्त हो जाते हैं परन्तु उनमें रहने वाली आसक्ति निवृत्त नहीं होती। आसक्ति निवृत्त होती है प्रभु के दर्शन से और दर्शन होते हैं अनन्य भक्ति से।

भक्त के तीन लक्षण होते हैं –

1. प्रभु पर जीवित विश्वास
2. उनकी सतत बरसने वाली कृपा का भरोसा
3. सर्वस्व का समर्पण।

अनन्य भक्ति ऐसे मिलती है – प्रभु कृपा, गुरु कृपा और आत्म कृपा अर्थात गुरु नाम प्रताप।

योनि जड़ वन पशु से उभारा है उसने।
दिया तन मनुष्य का कि हो योग उससे॥

यह है प्रभु कृपा। दूसरी कृपा है गुरुदेव की जो दया के सागर हैं, हमारा हाथ पकड़ कर अध्यात्म की तरफ बढ़ा रहे हैं और तीसरी कृपा है नाम के प्रताप की जो गुरुदेव ने हमें दिया है।

बहन उमा शुक्ल जी

गीता के अध्याय 3 के श्लोक 6 में बताया गया है कि जो व्यक्ति इन्द्रियों को रोककर मन से इन्द्रियों का चिन्तन करता है वह मूर्ख है, मिथ्याचारी है। कर्म मात्र बन्धन का कारण है, विषय भोग दुःख के स्रोत हैं, ऐसा सोचता हुआ अपने को कर्म और विषय भोग से रोक लेता है, परन्तु न तो कर्म की लालसा जाती है, न भोग की लालसा जाती है। मन से इनके बारे में सोचता रहता है। जब तक लालसायें, कामनायें व्यक्ति में हैं तब तक ऐसी ही स्थिति रहती है।

आगे श्लोक 7 में भगवान् बताते हैं – जो पुरुष मन से इन्द्रियों का संयम करता है और शरीर से अनासक्त भाव से भोगों को भोगता है वह बन्धन से मुक्त रहता है। इसलिये मनुष्य को चाहिये कि समुचित मनोवृत्ति से कर्म करे, समुचित मनोवृत्ति से प्राप्त भोगों को भोगे और जो प्राप्त हो उसी में सन्तुष्ट रहे क्योंकि सन्तोष में ही सबसे बड़ा सुख है। इन्द्रियों को काबू में करने के लिये उनको भजन के द्वारा थकाना चाहिये। मन में हर समय भगवान् को बसाना चाहिये और सभी सांसारिक कार्य करते रहना चाहिये।

कर ते कर्म करहु विधि नाना।
मन राखहु जहँ कृपा निधाना॥

सभी में अनन्त शक्ति भरी हुई है, हम पहचान नहीं पाते हैं। अपना लक्ष्य पहचान कर चेष्टा आरम्भ कर देनी चाहिए, इसी को आत्म कृपा कहते हैं। गीता व स्वामी जी के साहित्य का अध्ययन करना चाहिये। व्यर्थ की बातों में समय न गवाँकर उसका अध्ययन में सदुपयोग करना चाहिये।

श्री दीपक दीक्षित जी

व्यवहार हमारी साधना का मुख्य अंग है। व्यवहार में साधना हो और साधना में व्यवहार। शिविर में आने का मतलब है अपने को सुधारना। हम अपने व्यवहार में प्रेम को ले आयें। प्रेम में सेवा भी है, सहानुभूति भी है और उदारता भी। यही साधना है। प्रेम और सेवा से भरे रहो।

स्वामी जी कहते हैं कि प्रेम ऐसा करो कि व्यक्ति आपके प्रति आकर्षित हो जाये। सेवा वाणी से भी हो सकती है और मुस्कराहट से भी। सभी काम मनोयोग से करने चाहिए, कोई काम छोटा नहीं होता। जो गुरु जी ने कहा है उसे व्यवहार में लायें।

बहन मीरा दुबे जी

गुरुदेव के पत्रों से हमें ये सन्देश मिलते हैं – सुख-दु:ख में सम रहना है। किसी भी दु:ख को हावी नहीं होने देना और न ही सुख को। भगवान् भक्त को प्रेम करते हैं। प्रेम का अर्थ केवल देना है, प्रेम लेना नहीं जानता। शरीर एक रथ के समान है, शौर्य और धैर्य इसके पहिये हैं, सत्य और शील ध्वजा हैं। हमारी साधना अवरोह मार्ग की है। शक्ति तब आती है जब प्रेम की मात्रा असीम हो। जब भक्ति हृदय में उतरती है तो ज्ञान और वैराग्य स्वयं आ जाते हैं।

रामायण में भगवान् ने शबरी को नौ प्रकार की भक्ति बताई थी। भगवान् के गुण अपने में उतारना ही भगवान् के दर्शन हैं। मन्त्र जाप भक्ति का आधार है।

डॉ. रैना गोयल जी

डॉ. रैना श्रद्धेय साहू काशीनाथ जी की धौत्री हैं जो लन्दन से बीसलपुर शिविर के लिये आई थीं। उन्होंने अपने वक्तव्य में राम नाम की महिमा का वर्णन करते हुए बताया कि इसकी शक्ति को मापा नहीं जा सकता। करोड़ों वर्ष पहले पद्मपुराण में बता दिया गया था कि एक राम का नाम सहस्र विष्णु नामों के बराबर है। भगवान् शिव ने माता पार्वती के प्रति कहा था –

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्र नाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने॥

रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है –

जो संपति सिव रावनहि दीन्ह दिए दस माथ।
सोइ सम्पदा विभीषनहि सकुचि दीन्ह रघुनाथ॥
भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ।
नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ॥
उल्टा नाम जपत जग जाना।
बाल्मीक भये ब्रह्म समाना॥
अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती।
सब तज भजन करौं दिन राती॥

अत: सोते-जागते हमें राम का नाम जपना है।

बहन रमना सेखड़ी जी

गीता में भगवान् हमें सब कुछ सिखाते हैं। अध्याय 5 के श्लोक 10 में भगवान् ने बताया है –

जो पुरुष सब कर्मों को परमात्मा में अर्पण करके आसक्ति को त्याग कर कर्म करता है वह पुरुष जल में कमल के पत्ते की भाँति पाप से लिप्त नहीं होता। **सङ्गं त्यक्त्वा** का अर्थ है कि कोई भी काम मैं नहीं करता, प्रभु ही करते हैं। भक्ति बन्धन से मुक्त कर सकती है। जो भी सुख-दु:ख मिलता है, प्रारब्ध से ही मिलता है, अन्य किसी को दोष देना उचित नहीं है।

भगवान् ने मनुष्य को कर्म की स्वतन्त्रता दी है, फल अपने हाथ में रखा है। गणेश जी विवेक का प्रतीक हैं, उनको स्मरण करने से विवेकपूर्ण कार्य होगा। अच्छे कर्म करते ही रहो, राम नाम जपते ही रहो, फल तो भगवान् अच्छा ही देंगे।

श्री रमेश चन्द्र गुप्त जी

हम गुरु महाराज की स्तुति करते हुए कहते हैं – **गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णु:, गुरुर्देवो महेश्वर:।** इसका अर्थ है कि जिस प्रकार ब्रह्मा हमारे जन्मदाता हैं उसी प्रकार गुरु के सान्निध्य में आकर ज्ञान की प्राप्ति होने से हमारा असली जन्म होता है। विष्णु इसलिये कहा क्योंकि गुरु जी हमें जीवन की कला सिखाते हैं और महेश्वर इसलिये क्योंकि वे हमारे पापों का, क्लेशों का संहार करते हैं।

हम सब गुरुदेव के प्रेम से खिंच कर दूर-दूर से शिविर में आते हैं, एक बहन तो लन्दन से आई हैं। प्रेम, सेवा, भक्ति – सब एक ही बात है। सेवा के

बारे में गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस में लिखा है –

सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥

और सेवक ही भगवान् को प्रिय होता है। इसीलिये कहा है –

सुनहु विभीषन प्रभु कै रीती।
करहिं सदा सेवक पर प्रीती॥

और सेवा क्या है –

सोइ सेवक मम प्रियतम सोई।
मम अनुसासन मानहिं जोई॥

अर्थात गुरु की आज्ञा का पालन ही गुरु की सेवा है। शिविर के नियम गुरुदेव द्वारा निर्धारित किये हुए हैं। यद्यपि समय के साथ उनमें कुछ परिवर्तन करने पड़ते हैं, फिर भी यथासम्भव उनका पालन करना ही चाहिए। कम से कम जाप के समय मोबाइल फोन तो बन्द करके रखना ही चाहिये।

बहन कमला वर्मा जी

भगवान् ने गीता के अध्याय 2 के श्लोक 57 में बताया है कि जो पुरुष शुभ या अशुभ को प्राप्त होकर न प्रसन्न होता है और न उससे द्वेष करता है उसकी बुद्धि स्थिर है अर्थात जिन अवसरों को हम शुभ या अशुभ समझते हैं वे वास्तव में वैसे नहीं हैं। दो बातें हमेशा याद रखने की हैं –

1. जन्म है तो मृत्यु भी है। और
2. सत्य केवल भगवान् हैं।

मृत्यु एक वफादार मित्र है। इसमें भी भगवान् का मंगलमय विधान है। मृत्यु के बिना संसार का क्या होगा हम सोच भी नहीं सकते।

योनि जड़ वन पशु से उभारा है उसने,
दिया तन मनुष्य का कि हो योग उससे।

पहले हम पहाड़ पत्थर थे, फिर वनस्पति में आये, फिर पशु बने और न जाने कितने जन्म के बाद हम मनुष्य बने। यह जो माया रूपी संसार है, इसको हम ईश्वर की शक्ति के सहारे से पार करते हैं। सुबह शाम के जाप के अतिरिक्त हम सारे गृहस्थी के काम भी भगवान् को याद करते हुए करें। जाप चार तरह के होते हैं – **वाचिक, उपांशु, मानसिक एवं अजपा।** मानसिक से अजपा चलने लगता है जो कई गुणा प्रभावशाली है। हममें कितना कूड़ा करकट है, यह गणनीय नहीं है, हमारा साधन कौन-सा है, निष्ठा लगन कितनी है, यह महत्वपूर्ण है।

श्री कृष्ण चन्द्र मित्तल जी

फरीदाबाद से शिविर के लिये पधारे श्री कृष्ण चन्द्र मित्तल सम्भवतः एकमात्र ऐसे साधक हैं जिन्हें गुरुदेव का सान्निध्य प्राप्त हुआ था। सन् 1942 में जब गुरुदेव महाराज अपनी दिगोली की तपस्या समाप्त करके बीसलपुर पधारे थे उस समय श्री मित्तल की अवस्था लगभग 7 वर्ष की रही होगी। उनके सान्निध्य के संस्मरण के कुछ अंश सुनाकर श्री मित्तल जी ने सभी उपस्थित साधकों को मन्त्रमुग्ध कर दिया।

आँखें बन्द करके जब श्री मित्तल जी ने उन घटनाओं का वर्णन किया तो उनका गला भर आया और तन पुलकित हो गया। उनको स्मरण हो आया कि किस प्रकार गुरु महाराज ने साहू काशीनाथ जी से मिलकर कुछ चुनिन्दा लोगों के घर जाना शुरु किया, किस प्रकार साधना पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया और साधना परिवार की स्थापना की जिसका मुख्यालय बीसलपुर में ही रखा गया। गुरुदेव तो परिव्राजक थे, अतः एक स्थान पर तो ठहरते नहीं थे, जगह-जगह जाकर शिविर लगाया करते थे। साधकों के गुरुदेव के नाम लिखे गये पत्र साहू काशीनाथ जी के पते पर ही आते थे जो यहाँ से पुनः गुरु जी के पास प्रेषित कर दिये जाते थे।

गुरु जी की जीवन शैली के बारे में श्री मित्तल ने बताया कि वे बालकों को बहुत प्रेम करते थे, उनके साथ बालकों की तरह खेलते थे। भोजन में सुबह दलिया, दोपहर में एक रोटी और दाल तथा

सायं को केवल एक गिलास दूध। गुरुदेव कहा करते थे कि जो मेरी ओर आता है, मैं उसका हो जाता हूँ। उन्होंने अपने जीवन में समय को बहुत महत्त्व दिया। वो कहते थे कि वर्तमान जन्म उनका अन्तिम जन्म है।

बहन अरुणा पाण्डेय जी

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा
सिंधु नर रूप हरि।

नर के रूप में गुरुदेव हरि ही थे। जैसे भगवान् राम का जब बनवास हुआ तो सब उन्हीं का दर्शन करना चाहते थे, इसी तरह का रूप गुरु महाराज का था। गुरुदेव ने दस वर्ष में सौ वर्ष का काम किया। जब तक गुरु नहीं थे तो हम अपना कल्याण नहीं देख पाते थे। गुरुदेव ने समझाया – हर परिस्थिति कल्याण के लिये होती है। कर्मकाण्ड से हमारा कल्याण नहीं होता।

गुरुदेव ने हमारा जो मार्ग प्रशस्त किया है उसी पर हमें चलना है। आत्मकृपा हमें स्वयं करनी है। जब हमारा स्वभाव सुभाव हो जायेगा तो सब अच्छा ही होगा।

गुरुदेव ने **आध्यात्मिक साधन-1** में लिखा है कि अमंगल तो संसार में कुछ है ही नहीं, केवल हमें लगता है और जिसमे हमें सुख प्रतीत होता है उसी में मंगल लगता है। हमें स्वयं अपने ऊपर उनकी कृपा करनी है।

गुरुदेव का साहित्य पढ़कर, शिक्षाओं का पालन करके अपने स्वभाव को सुभाव बनाना है।

गुरुदेव ने कहा है –

अरे मन संभल संभल पग धरियो,
इस जग में नहीं कोई अपना परछाईं से डरियो,
धन दौलत और कुटुंब कबीला
इनसे नेह कबहुँ मत रखियो,
राम नाम सुख धाम जगत में
सुमिरि सुमिरि जग तरियो।

श्री अनिल मित्तल जी

श्री मित्तल ने गुरुदेव भगवान् के बारे में कुछ और बातें बताईं और कहा कि अगर प्रेम नहीं है तो हम उसकी सेवा भी नहीं कर पायेंगे। साहू काशीनाथ जी का प्रेम कैसा विलक्षण रहा होगा जिन्हें गुरु महाराज ने अपनाया। जो गुरुदेव के सहारे हैं उसको किसी अन्य सहारे की आवश्यकता नहीं है।

अन्त में श्री मित्तल जी ने बताया कि शिविर अब समाप्ति की ओर बढ़ रहा है। आनन्द अपनी चरम सीमा पर है, चारों ओर से आनन्द की वर्षा हो रही है। इसके बाद श्री मित्तल जी ने सभी साधक भाई बहनों का धन्यवाद किया जिन्होंने शिविर व्यवस्था में सहयोग किया और बाहर से आने वालों का धन्यवाद किया जिन्होंने अपनी उपस्थिति से शिविर को सफल बनाया। जिनको जो ड्यूटी मिली, सभी ने पूर्ण निष्ठा से उसको निभाया। सबसे अधिक धन्यवाद गुरुदेव महाराज को दिया जिनकी महती कृपा से शिविर का आयोजन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो पाया।

❖ ❖ ❖

कार्यकारिणी की बैठक का विवरण

साधना परिवार की कार्यकारिणी के सदस्यों की बैठक दिनांक 17 दिसम्बर, 2022 को साधना धाम के परिसर में श्री विष्णु कुमार जी गोयल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई जिसमें निम्नलिखित सदस्य उपस्थित रहे –

1. श्री विष्णु कुमार गोयल – अध्यक्ष
2. श्री अनिल मित्तल – उपाध्यक्ष
3. श्रीमती रमना सेखड़ी – सचिव
4. श्री अनिरुद्ध अग्निहोत्रि – कोषाध्यक्ष
5. श्रीमती सोमवती मिश्र – सदस्य

6. श्रीमती कमला सिंह (वर्मा) – सदस्य
7. श्री दीपक दीक्षित – सदस्य
8. श्री रमेश जायसवाल – सदस्य
9. श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल – सदस्य
10. श्री विजयेन्द्र पाल भण्डारी – सदस्य
11. श्री पुरन्दर तिवारी – सदस्य
12. श्रीमती अरुणा पाण्डेय – सदस्य
13. श्री हरपाल सिंह राजपूत – सदस्य
14. श्री सुधीर कान्त अग्रवाल – सदस्य
15. श्री मोहित मित्तल – सदस्य
16. श्री विष्णु अग्रवाल – वि.आ. सदस्य
17. श्री कृष्ण अवतार अग्रवाल – वि.आ. सदस्य
18. श्री रवि कान्त भण्डारी - प्रबन्धक

श्री गुरुदेव जी की वन्दना के पश्चात बैठक की कार्यवाही आरम्भ की गई जिसका विवरण निम्नानुसार है –

सर्वप्रथम दिनांक 13 जुलाई, 2022 की बैठक की कार्यवाही पढ़कर सुनाई गई जो सभी सदस्यों द्वारा अनुमोदित की गई। कुछ माननीय सदस्यों ने पिछली बैठक में पारित प्रस्तावों के कार्यान्वयन के बारे में पूछताछ की। तकनीकी समिति की रिपोर्ट तथा धाम में निर्माण कार्य की धीमी गति के कारणों पर विचार विमर्श करने के बाद निर्णय लिया गया कि विभिन्न कानूनी पहलुओं व तकनीकी समिति की पुनः समीक्षा करके शीघ्र ही सदस्यों को अवगत कराया जाये जिससे सर्वसम्मत निर्णय लिया जा सके।

2. सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया कि साधना परिवार के विभिन्न बैंकों के सभी खातों में कुल मिलाकर पाँच लाख रुपये से अधिक जितनी भी राशि हो वह सावधि जमा खाते में डाल दी जाये।

3. पंजाब नेशनल बैंक के समस्त खातों का परिचालन न होने के कारण यह निर्णय लिया गया कि इस बैंक में जो भी खाते हैं उन्हें या तो बन्द कर दिया जाये या न्यूनतम जमा राशि छोड़ी जाये।

4. इसके बाद तुलन पत्र 2021-22 पर चर्चा के बाद पुष्टि की गई। नवम्बर 2022 की अद्यतन वित्तीय स्थिति पर भी चर्चा हुई। अध्यक्ष महोदय ने गत वर्षों से लम्बित टीडीएस की वापसी के बारे में सदस्यों को अवगत कराया कि इस विषय में सीए से उचित कार्यवाही करने के लिये कहा जा चुका है।

5. माननीय अध्यक्ष जी ने दिगोली तपस्थली के निर्माण कार्य की प्रगति से सदस्यों को अवगत कराया तथा अनुरोध किया कि माननीय सदस्य समय-समय पर दिगोली तपस्थली जाकर कार्य की प्रगति के बारे में अपनी संस्तुति दें। आगे होने वाले निर्माण कार्य के लिये सभी सदस्यों ने सहमति प्रदान की।

6. यह निर्णय लिया गया कि हरिद्वार धाम के बेसमेंट में सीवर इत्यादि का जो कार्य बचा है उसे शीघ्र पूरा करवाने की व्यवस्था की जाये।

7. साधना धाम के बेसमेंट में दो लैट्रिन व बाथरूम का निर्माण कराने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किया गया।

8. साधना धाम के बाहर की दीवारों की आवश्यक मरम्मत व रंगाई-पुताई का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किया गया।

9. पुराने साधना केन्द्रों को सक्रिय करने हेतु श्री पुरन्दर तिवारी जी की अध्यक्षता में निम्नलिखित सदस्यों की समिति का गठन किया गया –

1. श्री पुरन्दर तिवारी
2. श्री रमेश जायसवाल
3. श्री दीपक दीक्षित

10. पहचान पत्र जारी करने की प्रक्रिया में तीव्रता लाने की आवश्यकता पर सहमति हुई।

इसके पश्चात दो मिनट का मौन धारण करके दिवंगत साधकों को श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

अन्त में माननीय अध्यक्ष जी ने समस्त उपस्थित सदस्यों का हार्दिक धन्यवाद किया। तत्पश्चात गुरुदेव को भोग लगाकर कार्यक्रम की पूर्ति की गई।

रमना सेखड़ी (सचिव)

गुरुदेव जन्म दिवस शिविर

(18 से 21 दिसम्बर 2022)

गुरुदेव महाराज का जन्म दिवस हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी धूमधाम से मनाया गया। कार्यक्रम के अनुसार 16 दिसम्बर को प्रातः 10:00 बजे हवन किया गया, दोपहर 12:00 बजे ब्रह्मभोज हुआ, 2:00 बजे जन्म महोत्सव तथा सायं 6:00 बजे से आरम्भ होकर भोजन के समय तक भजन सन्ध्या का कार्यक्रम साधकों द्वारा प्रस्तुत किया गया।

दिनांक 18 दिसम्बर से 21 दिसम्बर तक शिविर का आयोजन किया गया जिसमें 65 साधकों ने भाग लिया। शिविर की अवधि में साधकों द्वारा दिये गये प्रवचनों का सार नीचे दिया जा रहा है –

प्रवचन सार

श्रीमती रमना सेखड़ी जी

श्री गुरु महाराज के जन्मदिन के उपलक्ष्य में यह शिविर आयोजित किया जा रहा है, वह गुरुदेव जिनकी माता जी ने अपनी मृत्यु से पहले अपने पति को कहा था कि यह बच्चा खास है, इसका ख्याल रखना।

गुरुजी ने अपने उपदेशों में कहा था –

इन्द्रियों को वश में रखना है क्योंकि ये बहुत जल्दी विषयों की ओर आकर्षित हो जाती हैं।

मन बुद्धि को आदेश देता है किसी भी कार्य को करने को। यदि बुद्धि जागृत है तो वह गलत कार्य नहीं करने देती वरना मन की बातों में आकर गलत कार्य कर बैठती है। अतः बुद्धि को विवेकशील बनाना होगा।

कल्याण प्रभु से होना है, अतः सही गलत का निर्णय मन के अनुसार नहीं करना है। हम शरीर नहीं हैं हम आत्मा हैं। शरीर नाशवान है आत्मा नित्य है। मोह ममता छोड़नी है, इससे हमारी काफी पीड़ाएं कम हो जायेंगी।

प्रभु प्राप्ति ही जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। आत्मा को बलवती करना है। संसार में सभी कुछ अच्छा नहीं है, यहाँ बुराइयाँ भी हैं। हमें सबको सहन करना सीखना है। सन्त तुलसीदास ने मानस में कहा भी है –

जड़ चेतन गुण दोषमय बिस्व कीन्ह करतार

प्रभु ही सब कुछ करने वाले हैं, प्रभु की ही सब रचना है। उचित समय आने पर सब होता चला जाता है। प्रभु भजन के लिये भूख लगनी चाहिए। श्रद्धा और विश्वास बहुत अधिक होनी चाहिए। गुरुदेव ने कहा है जिस रास्ते पर चल कर मुझे सब मिला है आपको भी निश्चित रूप से मिलेगा। अपने को दीन-हीन न समझें। प्रभु ने सभी को पूरी शक्ति देकर भेजा है।

श्रद्धा अन्दर से पैदा होती है। जब हम निर्मल होते हैं तो श्रद्धा और बढ़ती है। हमें प्रभु का होना है। सभी को अब प्रभु प्राप्ति का प्रयास करना है। इस अवसर को हाथ से न जाने दें। समय सरक रहा है। कामनायें बहुत बलवती हैं, एक पूरी करने पर तुरन्त दूसरी खड़ी हो जाती है। हमें वैराग्यवान होना पड़ेगा।

श्रीमती अरुणा पाण्डेय जी

सर्वप्रथम जीवन में गुरुदेव की आवश्यकता व महत्त्व बताया। इस सम्बन्ध में सन्त तुलसीदास ने कहा है –

उघरहिं विमल विलोचन ही के।
मिटहिं दोष दुःख भव रजनी के।।

गुरुदेव से मिलने के पश्चात ही हृदय की आँखें खुलती हैं अर्थात् विवेक जागृत होता है और इसके साथ ही जीवन के दुःख-दोष और कष्ट समाप्त हो जाते हैं। गुरुदेव अपने ज्ञानामृत से जीवन की दिशा और दशा बदल देते हैं।

गुरुदेव बताते हैं – आसक्ति हमारे दुःख का मूल कारण है। आसक्ति ही है जो नटी का वेश बनाकर हमारे जीवन में दूसरे रूप में आती है। इन्द्रियों के विषयों के प्रति यही आसक्ति असंयमित हो जाती है

तो व्यक्तियों के प्रति यह मोह रूप में प्रकट होती है। पदार्थों के प्रति लोभ व अपने प्रति मोह के रूप में प्रकट होती है।

इस साधन पथ का अवलम्बन लेने वालों को केवल मात्र महाशक्ति पर निर्भर रहना होगा। समय आने पर ये सब क्षीण होते चले जायेंगे।

इस राह पर चलते हुए हमें भटकना नहीं है। जो ज्ञान गुरुवर से मिला है उसे जीवन में उतारना और पचाना है। राम नाम का जप ही हमें ऊपर के सोपानों पर पहुँचायेगा, ऐसा विश्वास रखना होगा।

गीता वेद पुराण तुम्हीं हो
ब्रह्मा विष्णु महेश तुम्हीं हो
प्रभु प्रसाद पा ब्रह्म सा सद्गुरु
किस अन्य को शीश झुकायें हम।

श्री रवि कान्त शुक्ल जी

अष्टावक्र गीता में बताया गया है ज्ञान प्राप्त करो, प्रार्थना करो। इसमें यह भी बताया गया है कि अन्धकार को हटाने का प्रयास करना मूर्खता है। केवल दीपक जला दो, अन्धकार स्वत: समाप्त हो जायेगा। जब तक आपको नहीं मालूम कि आपमें शक्ति छिपी है, आप भटकते रहोगे। रस्सी में सांप का आभास अज्ञान के कारण होता है।

अष्टावक्र जी ने केवल उपदेश नहीं दिया, जनक जी को सिद्ध करके दिखाया भी। दो प्रकार के व्यक्ति हैं – अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी।

अन्तर्मुखी व्यक्ति के लिये ध्यान आदि का मार्ग उपयुक्त है, बहिर्मुखी के लिये सेवा आदि प्रमुख है।

मोक्ष क्या है – यह कोई स्थान है या चित्त की एक अवस्था है। निष्काम भाव से काम करने वाला भी स्वर्ग का अधिकारी होता है। समर्पण भाव से करने वाली सेवा पूजा ही होती है, बन्धन का कारण नहीं होती। अष्टावक्र की गीता मुमुक्षु लोगों के लिये है। यह ज्ञान समझने के लिये नहीं, पीने और पचाने के लिये है। अष्टावक्र आठ अंगों से टेढ़े-मेढे थे किन्तु आत्मज्ञानी थे। आत्मज्ञानी विनम्र होता है, अहंकारी कठोर होता है। बीज में ही पूरा वृक्ष विद्यमान है पर दिखाई नहीं देता। अनादि काल से विद्यमान वृक्ष का कोई तो बीज होगा भले ही हमें जानकारी न हो। प्रभु से हमारे अन्दर पात्रता आती जाती है। पात्रता का मतलब विनम्र मुमुक्षु होना।

तप, त्याग, वैराग्य हमारे आदर्श नहीं हैं, वे स्वत: ही हो जाते हैं। समता, सेवा, समर्पण ही हमारी साधना का आदर्श हैं। एक लाइन को छोटा करना है तो दूसरी बड़ी लाइन खींचनी होगी। अनुकूलता आती है तो प्रभु को धन्यवाद देना है। प्रतिकूलता आती है तो दोष नहीं देना बल्कि यह स्वीकार करना है कि प्रभु कोई पाठ पढ़ा रहे हैं। सब कुछ सहज में स्वीकार करना है। हम नहीं जानते हैं कि हमारे अन्दर कितने संस्कार हैं, कितने दोष हैं। अत: हमें जागरूक रहना है। सत्संग करें, गुरुदेव का साहित्य अवश्य पढ़ें। हम सत्य पथ के पथिक होने की चेष्टा कर सकते हैं, सफलता तो प्रभु के हाथ में है।

श्रीमती शशी वाजपेई जी

महाराज जी ने बताया है – मार्ग दो हैं – भक्ति मार्ग और ज्ञान मार्ग। यद्यपि दोनों मार्ग कल्याणकारी हैं परन्तु भक्ति मार्ग पर चलना आसान है। समाज से भागने की आवश्यकता नहीं है। सत्संग का अर्थ है सत्य का संग। भक्ति मार्ग में चलने के लिये कुछ खास नहीं करना।

हमारे अन्दर दैवीय सम्पदा आती चली जाती है जब हम सब कार्य करते हुए परमात्मा से जुड़े रहें और अहंकार से मुक्त रहें। जो भोग विलास के साधन मिले हैं उनका समुचित उपभोग करना है, उनसे भागना नहीं है और न ही उनके पीछे भागना है।

नाते नेह राम के मानूं ममता मोह बिसार।

जित देखूं तित तू ही तू है, हमारा अपना कुछ नहीं है। देखने की शक्ति उससे मिली, सुनने की शक्ति उसने दी है। हम दु:ख के भण्डार हैं, प्रभु ने अनन्त शक्ति दी है।

बन्धन का रास्ता बन्धन से होकर जाता है। वर्तमान संघर्ष हमारा स्वाभाविक पथ है, इससे घबराना नहीं

है। साधना सम्मिश्रण से बचना होगा। न कंचन बुरी है और ना ही कामिनी। जब सब कुछ प्रभु का समझने लगते हैं तो कुछ बुरा नहीं लगता है। गुरुदेव ने राम नाम पर जोर दिया है। एक मन्त्र का जाप करें। राम नाम दिव्य मन्त्र है। हमारे जीवन का लक्ष्य एक ही है, उसे पहचानें अर्जुन की तरह जिसे मछली की आँख के अतिरिक्त कुछ अन्य नहीं दिखा। मधुर मुस्कान, मधुर वाणी होनी चाहिए जीवन में।

श्रीमती कमला सिंह जी

प्रभु की तरफ जाने के लिये कई रास्ते होते हैं पर हम सरल सुगम साधन अपनाते हैं। रास्ता महाराज ने दिया है राम नाम जप का। इसी मन्त्र द्वारा सब कुछ होता चला जायेगा। गूलर में छोटा सा बीज होता है, पर उसी में विशाल वृक्ष समाहित रहता है।

हम सब बहुत भाग्यशाली हैं जो गुरुदेव की शरण में आये और वे हमारा विकास करते हुए आगे बढ़ाते चले जा रहे हैं।

हमें प्रयास करना है कि गुरुदेव के मार्ग पर चलें। भगवान् कहते हैं कोई अतिशय दुराचारी क्यों न हो, अनन्य भाव से हमारी शरण में आता है तो वह निर्मल हो जाता है। संशय नहीं होना चाहिए, दोष दृष्टि नहीं होनी चाहिए। अनन्यता होनी चाहिए।

श्री सुधीर कान्त अग्रवाल जी

श्री गुरु महाराज ने साधना और व्यवहार पुस्तक में लिखा है सबके हृदय में भगवान् का वास होता है। प्रेम और सेवा की भावना प्रधान होनी चाहिए। गुरुदेव कहते हैं संसार में जीने का तरीका है सबको अपना समझना परन्तु किसी से आशा नहीं करनी। व्यक्ति जैसे बरतता है वैसे ही बरतने दो। किसी से द्वेष नहीं करना। भगवान् का नाता ही सर्वोत्तम है, हम किसी से अपना अलग नाता नहीं जोड़ें। अपने को भुलाकर उसकी जगह रख कर देखना है, इससे अपने दुःख कम होने लगते हैं।

जीवन में व्यक्ति की सभी इच्छायें पूरी नहीं होती। हमारी मनोवृत्ति होनी चाहिए प्रेम की, विनय की। मालिक पर अधिक विश्वास रखियेगा।

श्री विष्णु कुमार गोयल जी

गुरुदेव महाराज ने कहा है – मैं गीता को अपने जीवन में रमा लेना चाहता हूँ। गीता मेरे लिये साधना का ग्रन्थ है, श्रद्धा का ग्रन्थ है। जीवन की हर समस्या का हल गीता में मिलेगा।

गीता हमारे जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती है। अर्जुन जब सहसा युद्ध से विमुख हो गया था तब भगवान् ने उसे समझाया कि युद्ध करना ही उसका कर्तव्य है। उसे यह भी बताया कि व्यक्ति समाज के लिये है और समझ व्यक्ति के लिये। आदर्श समाज बनाने के लिये आवश्यक है कि जो करणीय कार्य है उसे करें।

यदि दुनिया की बातों से डरेंगे तो हम आगे नहीं बढ़ पायेंगे। लोकनिन्दा के भय से हम अच्छे कार्यों को न छोड़ दें। लोकापवाद में अपने व्यवहार में परिवर्तन कर लेना चाहिए यदि वह लोककल्याण के लिये है। लाँछन के कारण किसी से द्वेष नहीं रखना चाहिए। उन्हें क्षमा कर दें तो वही लोग हमारे प्रशंसक भी बन जाते हैं। यही पथ है जिस पर चल कर हम आगे बढ़ सकते हैं।

व्यक्ति को जानना है कि सबमें न्यूनतायें हैं पर हम दिव्य पथ के पथिक हैं। न हम आत्मग्लानि करें न द्वेष करें क्योंकि यह व्यक्ति में वैमनस्य उत्पन्न करते हैं। माँ का आश्रय लें। वह हमारे द्वेषों को धो डालेगी। वही हमें सहारा देगी, निर्मल करेगी।

पाप और पुण्य, दोनों पल-पल बदल रहे हैं। सच्ची प्रार्थना यही है कि हम हर क्षण माँ की उपस्थिति का अनुभव करें। हम गुरुदेव के आश्रय में रहेंगे तो हर बुराई से बचते चले जायेंगे। सेवा भी तभी सम्भव है जब दोषों में दृष्टि न हो। यही दृष्टिकोण लेकर हमें समाज में प्रविष्ट करना होगा। यदि साधक में यह योग्यता नहीं है तो सेवा सम्भव नहीं है। योग्यता पैदा करनी पड़ेगी। विशेष बात यही है कि कार्य करते हुए यदि हमारी आलोचना हो रही है तो भी कार्य करते रहना चाहिए।

9.11.2022 से 11.2.2023 तक के दानदाताओं की सूची

साधकगण अपने दान की राशि चैक द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में जमा करवा सकते हैं।

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
BANK OF INDIA,
Haridwar
A/c No.: 721010110003147
I.F.S. Code: BKID0007210

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
HDFC BANK,
Bhoopatwala, Saptrishi Chungi, Haridwar
A/c No.: 50100537193693
I.F.S. Code: HDFC0005481

कृपा करके जमा करवाई हुई राशि का विवरण एवं अपना नाम और पता तथा PAN या आधार कार्ड नम्बर, पत्र अथवा फोन द्वारा साधना धाम कार्यालय में अवश्य सूचित करें। जिससे आपको रसीद आसानी से प्राप्त हो जायेगी।

– **रवि कान्त भण्डारी,** प्रबन्धक, साधना धाम, मोबाइल: 09872574514, 08273494285

1.	गुप्त दान	200000
2.	हरि प्रकाश सिंह चौहान, लखनऊ	101111
3.	हरि शंकर-मृदुला अग्रवाल, पीलीभीत	101000
4.	सुचरिता अरोड़ा, अमृतसर	100000
5.	ओम शंकर गुप्ता, कानपुर	100000
6.	कृष्ण कान्ता सुपुत्री साहू काशीनाथ मित्तल, बरेली	100000
7.	अनिल चन्द्र मित्तल, सुपुत्र साहू काशीनाथ मित्तल, बीसलपुर	100000
8.	अनिल चन्द्र मित्तल, सुपुत्र साहू काशीनाथ मित्तल, बीसलपुर	100000
9.	हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	100000
10.	गुप्त दान	100000
11.	गुप्त दान	100000
12.	गुप्त दान	100000
13.	प्रमोद कुमार मिश्रा, ऑनलाइन	51000
14.	मैसर्स देशराज एण्ड संस, चण्डीगढ़	51000
15.	आर.के. मेहरोत्रा, गुरुग्राम	50000
16.	एम.जी. त्रेहन, चण्डीगढ़	50000
17.	कानपुर संगत, कानपुर	45000
18.	हरिओम सत्संग, नई दिल्ली	41000
19.	कानपुर संगत, कानपुर	40000
20.	कानपुर संगत, कानपुर	40000
21.	सतीश खोसला, दिल्ली	21000
22.	लीना अग्रवाल, गाजियाबाद	21000
23.	डॉ. सुनीता, दिल्ली	21000
24.	राघव वर्मा, दिल्ली	21000
25.	गिरीश मोहन, हरिद्वार	20000
26.	नीरजा मोहन, हरिद्वार	20000
27.	कानपुर संगत, कानपुर	20000
28.	कृष्णा भण्डारी, गुरुग्राम	15000
29.	भावना जायसवाल, कानपुर	15000
30.	सुमित-अनामिका मिश्रा, ऑनलाइन	15000
31.	स्वर्ण धाम, नई दिल्ली	11000
32.	अजय कुमार अग्रवाल, बरेली	11000
33.	विष्णु गौर, कानपुर	11000
34.	साहनी नटराजन, ऑनलाइन	11000

(शेष अगले पृष्ठ पर...)

(9.11.2022 से 11.2.2023 तक के दानदाताओं की सूची पिछले पृष्ठ से ...)

35.	मनोज रल्हन, दिल्ली	11000
36.	मधु खुल्लर, गुरुग्राम	11000
37.	ऑनलाइन, कानपुर	10000
38.	आर.के. जोशी, रुद्रपुर	10000
39.	मैसर्स ओम टेक्नो फैब, ऑनलाइन	10000
40.	चंचल त्रेहन, चण्डीगढ़	10000
41.	जानकी देवी, कानपुर	10000
42.	जानकी देवी, कानपुर	10000
43.	कमला सिंह, कानपुर	10000
44.	सतीश खोसला, दिल्ली	10000
45.	उमा अग्रवाल, मेरठ	9000
46.	उमा अग्रवाल, मेरठ	9000
47.	उमा अग्रवाल, मेरठ	9000
48.	उमा अग्रवाल, मेरठ	9000
49.	उमा अग्रवाल, मेरठ	9000
50.	दादा भगवान सत्संग समूह, दिल्ली	8400
51.	जनक दुलारी, गोविंद नगर, कानपुर	6000
52.	श्रद्धा शर्मा, दिल्ली	5100
53.	सीबी गुप्ता, नई दिल्ली	5100
54.	विष्णु अग्रवाल, बरेली	5100
55.	पुष्प राज सिंह, नोएडा	5100
56.	पुष्प राज सिंह, नोएडा	5100
57.	नीता सहगल, नई दिल्ली	5100
58.	सुनील कान्त अग्रवाल, पीलीभीत	5100
59.	संजय अग्रवाल, फरीदाबाद	5100
60.	मनोज अग्रवाल, बीसलपुर	5100
61.	तनु सिंह (अग्रवाल), दिल्ली	5100
62.	कृष्ण कान्ता सुपुत्री साहू काशीनाथ मित्तल, बरेली	5100
63.	अनिरुद्ध-राखी अग्निहोत्री, रुड़की	5100
64.	अजय आनन्द, गाजियाबाद	5100
65.	सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	5100
66.	ज्ञानवती शुक्ला, गाजियाबाद	5100
67.	डॉ. नीति अग्रवाल, हरिद्वार	5100
68.	सुशील चन्द गोयल, आगरा	5100
69.	ऑनलाइन	5000
70.	भाव्या-ज्ञानेश पाण्डेय, कानपुर	5000
71.	अंकुर शर्मा सुपुत्र तनुज शर्मा, दिल्ली	5000
72.	सुनीति देवी, पीलीभीत	5000
73.	उमा अग्रवाल, मेरठ	5000
74.	सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5000
75.	सुनीति देवी, पीलीभीत	5000
76.	सुनील कान्त अग्रवाल, पीलीभीत	5000
77.	जानकी देवी, कानपुर	5000
78.	जनक दुलारी, गोविंद नगर, कानपुर	5000
79.	हरिओम सत्संग समूह, दिल्ली	4200
80.	सुरेन्द्र-राधा अग्रवाल, बीसलपुर	4100
81.	आनन्द कुमार अग्निहोत्री, कानपुर	4004
82.	अजय कुमार अग्रवाल, बरेली	3100
83.	गरिमा जोशी, दिगोली	3100
84.	हरिओम सत्संग, नई दिल्ली	3100
85.	राहुल भण्डारी, जालन्धर	3100
86.	दीपक शर्मा	3100
87.	बंशीलाल आहूजा, दिल्ली	3000
88.	हरि शंकर अग्रवाल, पीलीभीत	3000
89.	के.एन. मिश्रा, कानपुर	3000
90.	शशि अग्रवाल, हरिद्वार	2500

(शेष अगले पृष्ठ पर...)

(9.11.2022 से 11.2.2023 तक के दानदाताओं की सूची पिछले पृष्ठ से ...)

91.	मनोज कुमार गुप्ता, बीसलपुर	2500
92.	सन्दीप ढींगरा, पटेल नगर	2500
93.	शशि अग्रवाल, हरिद्वार	2500
94.	शशि अग्रवाल, हरिद्वार	2500
95.	मुनीश चन्द्र शर्मा, बरेली	2500
96.	सूरजभान सक्सेना, कानपुर	2200
97.	नीता सहगल, नई दिल्ली	2100
98.	गुरु ट्रेडर्स/रमेश जायसवाल, कानपुर	2100
99.	चन्द्र शेखर-निधि जायसवाल, कानपुर	2100
100.	ऑनलाइन	2100
101.	नीता सहगल, नई दिल्ली	2100
102.	अमिता अग्रवाल, दिल्ली	2100
103.	अशोक कुमार सुपुत्र सत्यवती गोयल, पिलखुवा	2100
104.	शशि बाजपेयी, कानपुर	2100
105.	कमला, कानपुर	2100
106.	दिनेश कुमार, पीलीभीत	2100
107.	सुनीता भण्डारी, लुधियाना	2100
108.	योगेश कुमार चण्डोक, फरीदाबाद	2100
109.	गिरीश चन्द्र अग्रवाल, पीलीभीत	2100
110.	डॉ. आकांक्षा अग्रवाल, मेरठ	2100
111.	राजेश प्रसाद मिश्रा, जबलपुर	2100
112.	चांदनी सुपुत्री दिनेश चन्द्र अग्रवाल, बीसलपुर	2100
113.	दिनेश चन्द्र अग्रवाल, बीसलपुर	2100
114.	मोहित मित्तल, बीसलपुर	2100
115.	उर्मिला मिश्रा, अहमदाबाद	2100
116.	नीता सूर्यवंशी, लखनऊ	2100
117.	सोमवती मिश्रा, रावतपुर, कानपुर	2100
118.	कृष्ण अवतार अग्रवाल, बीसलपुर	2100
119.	ललित मोहन जोशी, हल्द्वानी	2100
120.	सरोजनी अग्रवाल, दिल्ली	2100
121.	योगेश कुमार अग्रवाल, बीसलपुर	2100

स्वामीजी के वचन

दूसरों से हम यह आशा करें कि वह अपने तरीकों को बदल दें, तो यह प्रायः असम्भव है और यदि हमारा सुख दूसरों के तरीकों के आश्रित हो गया तो हम सुखी शायद ही हो पायें। परन्तु यदि हम अपनी आदत को ऐसा कर लें कि दूसरों की बातों से हम दुखी न हों तो कोई भी हमें दुखी न कर पायेगा।

– स्वामी रामानन्द

शोक समाचार

समस्त साधना परिवार को अत्यन्त दु:ख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि,

❖ ❖ ❖

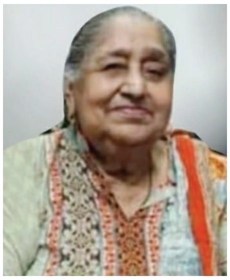

साधना धाम के भूतपूर्व प्रबन्धक दिवंगत श्री अशोक भण्डारी जी की धर्मपत्नी श्रीमती वीना भण्डारी जी का निधन दिनांक 3 जनवरी 2023 को हो गया है।

❖ ❖ ❖

हमारे साधक श्री अमित कुमार मिश्रा जी का असामयिक निधन दिनांक 5 जनवरी 2023 को हो गया है। अमित भैय्या हमारी समर्पित साधिका बहन राखी अग्निहोत्री जी के भाई थे। प्रभु की इच्छा ही सर्वोपरि है।

❖ ❖ ❖

हमारी वरिष्ठ साधिका कानपुर निवासी श्रीमती विजय लक्ष्मी जायसवाल जो श्रीमती सुशीला जायसवाल जी की ननद थीं, का 72 वर्ष की आयु में दिनांक 25 जनवरी 2023 को देहावसान हो गया है। श्रीमती विजय लक्ष्मी जायसवाल की बेटी श्रीमती निधि जायसवाल ने अपनी माताजी की आत्मा की शान्ति के लिये 2100/- रुपये की राशि गुरु चरणों में भेंट की।

❖ ❖ ❖

पूज्य गुरुदेव से विनम्र प्रार्थना है कि इन सभी दिवंगत आत्माओं को अपने श्री चरणों में स्थान दें तथा इनके परिवार जनों को इनका वियोग सहने की यथायोग्य शक्ति प्रदान करें। साधना परिवार के सभी साधक भाई-बहन अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं।

❖ ❖ ❖

श्री गुरुदेव निर्वाण-दिवस साधना शिविर-2023

14 अप्रैल 2023 को पूज्य गुरुदेव को श्रद्धांजलि स्वरूप अखण्ड जाप होगा। 15 अप्रैल को प्रातः अखण्ड जाप की पूर्ति के समय गंगा के पावन तट पर पूज्य गुरुदेव को श्रद्धा सुमन अर्पित किये जायेंगे। तत्पश्चात् मन्दिर में आकर साधकगण अपनी श्रद्धांजलि के भाव गुरुदेव के चरणों में प्रस्तुत करेंगे। 15 अप्रैल को ही दोपहर को भण्डारा होगा। इसी दिन दोपहर बाद शिविर विधिवत् प्रारम्भ होगा और 21 अप्रैल को शिविर की पूर्ति होगी।

साधना परिवार की कार्यकारिणी की बैठक 18 अप्रैल 2023 को कार्यालय में होगी। **20 अप्रैल को जनरल बॉडी की सभा रात्रि के समय धाम के प्रांगण में होगी।**

साधना शिविर में भाग लेने वाले साधक अपने आने की सूचना मैनेजर साधना-धाम को 15 दिन पूर्व देने की कृपा करें।

बाल-साधना-शिविर-2023

शिविर स्थानः स्वामी रामानन्द साधना-धाम,
संन्यास रोड, कनखल, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

समय : 7 जून से 11 जून 2023 प्रातः तक

कुछ वर्षों से ग्रीष्मावकाश में बाल-साधना शिविर का आयोजन सफलतापूर्वक किया जा रहा है। इस शिविर का मुख्य उद्देश्य है बालकों का आध्यात्मिक, चारित्रिक एवं शारीरिक विकास करना। पूज्य गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी की साधना पद्धति की सरल ढंग से जानकारी दी जायेगी एवं व्यावहारिक साधना के अन्तर्गत व्यावहारिक ज्ञान दिया जायेगा। शिविर में जाप का आवाहन, गीता पाठ, भजन एवं गोष्ठी का संचालन बालकों के द्वारा ही होगा अतः तैयारी करके आयें। प्रातः भ्रमण, खेल व योग के कार्यक्रम भी होंगे।

आवश्यक सामग्री : अपने पहनने के आवश्यक कपड़े, तौलिया, टूथपेस्ट व ब्रश, कंघा, साबुन, भ्रमण के लिये जूते, कापी, पैन एवं पेन्सिल।

बिस्तर एवं बर्तनों की व्यवस्था साधना-धाम की ओर से होगी।

कृपया अपने आने की सूचना 15 दिन पूर्व साधना-धाम में व्यवस्थापक महोदय को पत्र या फोन द्वारा अवश्य दें। (फोनः 01334-311821, मोबाइलः 08273494285)

प्रतियोगितायें

बच्चों को तीन ग्रुपों में बाँटा जाएगा।

1. पहला ग्रुप 7 वर्ष से 10 वर्ष तक के बच्चे -
   शिक्षाप्रद कहानियाँ।
2. दूसरा ग्रुप 11 वर्ष से 14 वर्ष तक के बच्चे -
   सन्तों की कहानियाँ एवं संस्मरण।
3. तीसरा ग्रुप 15 वर्ष से 20 वर्ष के बालक व बालिकायें -
   दिये गये विषय पर सामूहिक चर्चा (Group Discussion)।

श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य

1.	अध्यात्म विकास	इन पुस्तकों में श्री स्वामी जी ने अपनी विकासवादी नवीनतम साधना पद्धति का विस्तार से वर्णन किया है।
2.	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)	
3.	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)	
4.	Evolutionary Outlook on Life	
5.	Evolutionary Spiritualism	
6.	जीवन-रहस्य तथा उत्पादिनी शक्ति	काम शक्ति तथा अध्यात्म विषय पर स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
7.	गीता विमर्श	श्रीमद्भगवद्गीता के प्रथम 7 अध्यायों की स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
8.	व्यावहारिक साधना	पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखित तीन लेखों – (1) साधकों के लिये, (2) दम्पत्ति के लिये, (3) माता-पिता के प्रति का संकलन
9.	कैलाश-दर्शन	पूज्य स्वामी जी ने कुछ साधकों के साथ कैलाश-पर्वत की यात्रा व परिक्रमा की थी। उस यात्रा का एवं उनकी आत्मानुभूति का विशद् वर्णन
10.	गीतोपनिषद	श्रीमद्भगवद्गीता के आठ से अठारह अध्याय तक स्वर्गीय श्री के.सी. नैयर जी द्वारा व्याख्या
11.	हमारी साधना	श्री पुरुषोत्तम भटनागर द्वारा सम्पादित
12.	हमारी उपासना	
13.	साधना और व्यवहार	
14.	अशान्ति में	
15.	मेरे विचार	
16.	As I Understand	
17.	My Pilgrimage to Kailash	
18.	Sex and Spirituality	जीवन-रहस्य (प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित पुस्तकें)
19.	Our Worship	हमारी साधना
20.	Our Spiritual Sadhana Part-I	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)
21.	Our Spiritual Sadhana Part-II	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)
22.	स्वामी रामानन्द-एक आध्यात्मिक यात्रा	स्वस्पष्ट प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना
23.	पत्र-पीयूष	कु. शीला गौहरी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के पत्रों का संकलन
24.	स्वामी रामानन्द-चरित सुधा	स्व. डा. कविराज नरेन्द्र कुमार एवम् वैद्य श्री सत्यदेव
25.	स्वामी रामानन्द-वचनामृत	श्री जगदीश प्रसाद द्विवेदी द्वारा गुरुदेव की पुस्तकों से संकलन
26.	मेरी दक्षिण भारत-यात्रा	पूज्य सुमित्रा माँ जी द्वारा दक्षिण भारत यात्रा का रोचक वर्णन
27.	पत्तियाँ और फूल	भजन, पद, कीर्तन, आरती आदि का संकलन
28.	दैनिक आवाहन विधि	स्वामी जी की साधना प्रणाली पर आधारित - श्रीमती महेश प्रकाश
29.	Letters to Seekers	कु. शीला गौहरी एवं श्री विजय भण्डारी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के अंग्रेजी पत्रों का संकलन
30.	आत्मा की ओर	
31.	जीवन विकास - एक दृष्टि	Evolutionary Outlook on Life का हिन्दी अनुवाद
32.	विकासात्मक अध्यात्म	Evolutionary Spiritualism का हिन्दी अनुवाद
33.	गुरु के प्रति निष्ठा	तेजेन्द्र प्रताप सिंह
34.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 1)	अनाम साधिका
35.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 2)	
36.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 3)	
37.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 4)	
38.	माँ की विभूति - भक्ति रस (भाग 5)	
39.	श्रीराम भजन माला	श्री सूर्य प्रसाद शुक्ल 'राम सरन'
40.	माँ का भाव भरा प्रसाद गुरु का दिव्य प्रसाद	मीरा गुप्ता
41.	पत्र-पीयूष सार	पत्र-पीयूष का संग्रहीत संस्करण
42.	गीता पाठ	
43.	गृहस्थ और साधना	
44.	प्रभु दर्शन	
45.	प्रभु प्रसाद मिले तो	
46.	गीता प्रवेशिका	हिन्दी, संस्कृत व अंग्रेजी में गीता का संग्रहीत संस्करण - रमेश चन्द्र गुप्त

कानपुर सत्संग में जन्म दिवस के अवसर पर गुरुदेव के मंदिर की एक झलक

16 दिसम्बर 2022 को साधना धाम के मन्दिर में जाप की पूर्ति और गुरुदेव की प्रतिमा पर माल्यार्पण

गुरुदेव के 106वें जन्म महोत्सव पर हरिद्वार में साधना धाम की सजावट की एक झलक

जन्मदिवस के अवसर साधना धाम में आयोजित हवन की झांकी